ब्राह्मण संज्ञा विवेचन

★श्री शिवपूजन सिंह जी कुशवाहा एम० ए०

महर्षि दयानन्द जी सरस्वती महाराज तथा उनके द्वारा संचालित आर्य समाज का यह सिद्धान्त है कि ऋक्, यजु०, साम०, अथर्व० ये चार संहिता भाग ही ईश्वरीय ज्ञान हैं और ये ही वेद हैं, ब्राह्मण भाग उनके व्याख्या भाग हैं।

निखिल पौराणिक वर्ग का सिद्धान्त है कि चार वेदों के अतिरिक्त ब्राह्मण, आराण्यक, उपनिषद् ग्रन्थ भी ईश्वरीय ज्ञान वेद हैं।

विद्यावारिधि पं० ज्वाला प्रसाद मिश्र[१] पं० कालूराम शास्त्री[२]; पं० अखिलानन्द शर्मा कविरत्न[३]; पं० माधवाचार्य शास्त्री[४]; पं० दीनानाथ शर्मा शास्त्री[५]; स्वामी करपात्री जी महाराज[६]; पं० घनश्याम शर्मा शास्त्री[७]; पौराणिकों ने अपने-अपने ग्रन्थों में ब्राह्मण ग्रन्थों को भी वेद की संज्ञा दी है।

महर्षि दयानन्द जी सरस्वती[८] लिखते हैं—
(प्रश्न) वेद किन ग्रंथों का नाम है?

(उत्तर) ऋक्, यजु०, साम० और अथर्ववेद संहिता का, अन्य का नहीं।

(प्रश्न)—मन्त्र ब्राह्मणयोर्वेदनामधेयम् ॥

इत्यादि कात्मायनादि कृत प्रतिज्ञा सूत्रादि का अर्थ क्या करोगे?

(उत्तर) देखो संहिता पुस्तक के आरम्भ अध्याय की समाप्ति में वेद शब्द सनातन से लिखा आता है। और ब्राह्मण पुस्तक के आरम्भ वा अध्याय की समाप्ति में नहीं लिखा। और निरुक्ति में—

इत्यपि निगमो भवति। इति ब्राह्मणम् ॥
[नि० अ० ५। खं० ३। ४]

छन्दोब्राह्मणानि च तद्विषयाणि ॥
[अष्टाध्या० ४। २। ६६]

यह पाणिनीय सूत्र है। इससे भी स्पष्ट विदित होता है कि वेद मन्त्र भाग और ब्राह्मण व्याख्या भाग है। इसमें जो विशेष देखना चाहे तो मेरी बनाई "ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका" में देख लीजिये। यहाँ अनेकशः प्रमाणों से विरुद्ध होने से यह कात्यायन का वचन नहीं हो सकता ऐसा ही सिद्ध किया गया है। क्योंकि जो माने तो वेद सनातन कभी नहीं हो सकें। क्योंकि ब्राह्मण पुस्तकों में बहुत से ऋषि महर्षि और राजादि के इतिहास लिखे हैं।

---

१. "दयानन्द तिमिर भास्कर" पृष्ठ २८२ से २६४ तक [तृतीयावृत्ति, संवत् १९६२ वि०, बम्बई]
२. "आर्य समाज की मौत" पृष्ठ ५८ से ६३ तक [फरवरी सन् १९३१ ई०, प्रथम संस्करण] तथा "पुराण वर्म" पूर्वार्द्ध, पृष्ठ ३२ से ४७ तक [संवत् १९८६ वि०, द्वितीय संस्करण]
३. "वैदिक सत्यार्थ प्रकाशः" पृष्ठ ११८ से १२० तक [सन् १९४० ई०, प्रथम संस्करण]
४. "पुराण-दिग्दर्शन" पृष्ठ १०९ से ११७ तक [संवत् २००६ वि०, दिल्ली संस्करण]
५. "श्री सनातन धर्मालोक" छठा सुमन, प्रथम संस्करण, पृष्ठ ४४ से १७८ तक
६. "वेद का स्वरूप और प्रामाण्य" पृष्ठ २३० से ४३५ तक [संवत् २०१६ वि० वाराणसी प्रथम संस्करण]
७. "भूमिकाभासः" पृष्ठ १६१ से १७७ तक [धर्म यन्त्रालय, मेरठ में मुद्रित. प्रथम संस्करण]
८. "सत्यार्थ प्रकाश" सप्तम समुल्लास

सौर इतिहास जिसका हो उसके जन्म के पश्चात् लिखा जाता है, वह ग्रन्थ भी उसके जन्म के पश्चात् होता है। वेदों में किसी का इतिहास नहीं, किन्तु जिस जिस शब्द से विद्या का बोध होवे उस उस शब्द का प्रयोग किया है। किसी विशेष मनुष्य की संज्ञा वा विशेष कथा का प्रसंग वेदों में नहीं।''

इसी प्रकार आप ''ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका'' 'वेद संज्ञा विचारः' प्रकरण में लिखते हैं:—

''अथ कोयं वेदो नाम ?''

वेद किनका नाम है ?

'मन्त्र भाग संहितेत्याह।'

मन्त्र संहिताओं का।

'किञ्च, ''मन्त्र ब्राह्मणयोर्वेदनामधेयमि'' ति कात्यायनोक्तेर्ब्राह्मणभागस्यापि वेदसंज्ञा कुतो न स्वीक्रियत इति ?'

जो कात्यायन ऋषि ने कहा है कि मन्त्र और ब्राह्मण ग्रन्थों का नाम वेद है। फिर ब्राह्मण भाग को भी वेदों में ग्रहण आप लोग क्यों नहीं करते हैं ?

'मैवं वाच्यम्। न ब्राह्मणानां वेदसंज्ञा भवितुमर्हति।'

कुतः ?

पुराणेतिहाससंज्ञकत्वाद्वेदव्याख्यानादृषिभिरुक्तत्वादनीश्वरोक्तत्वात्कात्यायनभिन्नै ऋषिभिर्वेदसंज्ञायामस्वीकृतत्वान्मनुष्यबुद्धिरचितत्त्वाच्चेति। यथा ब्राह्मणग्रन्थेषु मनुष्याणां नाम लेख पूर्वका लौकिकः इतिहासाः सन्ति न चैव मन्त्रभागे।'

ब्राह्मण ग्रन्थ वेद नहीं हो सकते, क्योंकि उन्हीं का नाम इतिहास, पुराण, कल्प, गाथा और नाराशंसी भी है। वे वेदों के व्याख्यान हैं। वे ऋषियों के कहे हुए हैं। वे ईश्वरोक्त नहीं हैं। एक कात्यायन को छोड़ के किसी अन्य ऋषि ने उनके वेद होने में साक्षी नहीं दी है। वे देहधारी पुरुषों के बनाये हैं।

इन हेतुओं से ब्राह्मण ग्रन्थों की वेद संज्ञा नहीं हो सकती, और मन्त्र संहिताओं का ''वेद'' नाम इसलिए है क्योंकि वे ईश्वर रचित और सब विद्याओं का मूल हैं, और जिस प्रकार ब्राह्मण ग्रन्थों में मनुष्यों के नाम लेखपूर्वक इतिहास हैं इस प्रकार मन्त्र भाग में नहीं है।''...

यहां पर महर्षि दयानन्द जी ने कात्यायन के मत की आलोचना करते हुए ब्राह्मण ग्रन्थों के 'वेद' न होने के छः कारण दिए हैं।

पौराणिक पण्डित दीनानाथ शास्त्री ने ''श्री सनातनधर्मा लोक'' छठा सुमन में बहुत उछल कूद मचाया है पर उनकी सभी दलीलें तर्कहीन हैं। केवल द्राविड़ी प्राणायाम के सिवाय और कुछ नहीं है।

पं० ज्वाला प्रसाद मिश्र को पं० तुलसीराम जी स्वामी सामवेद भाष्कार[९], पं० कालूराम शास्त्री को पं० मनसाराम जी ''वैदिक तोप''[१०], पं० घन श्याम शर्मा शास्त्री को सिद्धान्त शिरोमणि पं० द्विजेन्द्रनाथ शर्मा जी[११], तथा स्वामी करपात्री जी महाराज को आर्य समाज मेस्टन रोड, कानपुर[१२] ने मुँहतोड़ उत्तर दिया है।

महर्षि दयानन्द जी महाराज ने जो कुछ लिखा है अक्षरशः सत्य है।

पं० सत्यव्रत जी सामश्रमी लिखते हैं।

''चतुर्वेदविद्भिर्ब्रह्मभिः ब्राह्मणैर्महर्षिभिः

---

९. ''भास्कर प्रकाश'' [स्वामी प्रेस, मेरठ द्वारा मुद्रित व प्रकाशित]

१०. ''पौराणिक पोल प्रकाश [आर्य साहित्य मन्दिर, लाहौर द्वारा प्रकाशित अब अप्राप्य]

११. ''भूमिका प्रकाश'' [श्रीमती सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, द्वारा प्राप्य]

१२. ''वेद संज्ञा विमर्श'' [मंत्री जी, आर्य समाज, मेस्टन रोड़, कानपुर द्वारा प्रकाशित]

प्रोक्तानि यानि वेद व्याख्यानानि तानि ब्राह्मणानि ।"[१३]

अर्थात्—"चतुर्वेदविद् ब्राह्मण महर्षियों द्वारा प्रोक्त जो वेद के व्याख्यान हैं उनको ब्राह्मण कहते हैं।

श्री सायणाचार्य जी पौराणिक संस्कार के कारण मन्त्र, ब्राह्मण दोनों को वेद मानते हैं, परन्तु "काव्य संहिता" भाष्य की भूमिका में स्पष्ट लिखते हैं कि :—

"तत्र शतपथ ब्राह्मणस्य मन्त्र व्याख्यानरूपत्वाद् व्याख्येय मन्त्र प्रतिपादकः संहिता ग्रंथः पूर्व भावित्वात् प्रथमो भवति ।"

[काण्व संहिता भाष्य, पृष्ठ ८ चौखम्बा संस्कृत सीरिज, वाराणसी संस्करण]

अर्थात्—"शतपथ ब्राह्मण मन्त्रों की व्याख्यारूप है इसलिए जिन मन्त्रों की व्याख्या करती है उनका प्रतिपादक संहिता ग्रन्थ पूर्वभावी होने से प्रथम होता है।"

पुनः श्री सायणाचार्य जी अपनी "तैत्तिरीय संहिता भाष्य भूमिका" में ब्राह्मणों को मन्त्र का व्याख्यान कहते हैं।

आचार्य पं० सत्यव्रत जी सामश्रमी, कलकत्ता श्री सायणाचार्य के उक्त मत का समर्थन करते हुए लिखते हैं—

…"सायणाचार्येण स्वकण्ठरवेणैवास्य मन्त्र व्याख्यानरूपत्वमांभाषि। तथाहि तैत्तिरीय संहिता भाष्यभूमिकायाम्—"ब्राह्मणस्य मन्त्रव्याख्यान रूपत्वात् मन्त्रा एवादौ समाम्नाता "इति ।"[१४]

महर्षि दयानन्द जी अपने "ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका" वेद संज्ञा विचार में लिखते हैं—"ब्रह्म नाम ब्राह्मण का है। अतः ब्रह्मादि जो वेदों के जानने वाले महर्षि लोग थे उन्हीं के बनाये हुए ऐतरेय, शतपथ, आदि वेदों के व्याख्यान हैं, इसी कारण से उनके किये ग्रन्थों का नाम ब्राह्मण हुआ है। शतपथ में लिखते हैं कि "ब्रह्म" ब्राह्मण है और "क्षत्र" "राजन्य" होता है।"

महर्षि दयानन्द जी के उक्त लेख की पुष्टि करते हुए **आचार्य पं० सत्यव्रत जी सामश्रमी** लिखते हैं—

"ततो दयानन्द स्वामिना च ऋक् भाष्यभूमिकायां तदेव स्फुटमेवावादि तत्रहि वेदसंज्ञा विचारोपसंहारे—"ब्रह्मे ति ब्राह्मणानां नामास्ति । अत्र प्रमाणाम् । ब्रह्म व ब्राह्मणः क्षत्रं राजन्यः (श० १३-१) इति ।"[१५]

पुनः सामश्रमी जी "मन्त्र भाष्य" को ही ब्राह्मण मानते हैं:—

"…वेदार्थ वित्तमेव ब्राह्मणेन प्रोक्तं यागविध्यनुस्यूतं मन्त्रभाष्यमेव ब्राह्मण इति । १६

महर्षि पराशर जी लिखते हैं कि:—

'अस्य मन्त्रस्यचार्थोऽयम्, अयं मन्त्रोऽत्र वर्तते।
तत्तस्य ब्राह्मणं ज्ञेयं, मन्त्रस्येतिश्रुति क्रमः ॥"

[बृहत्पाराशरीस्मृति २-४४]

अर्थात्—"इस मंत्र का यह अर्थ है, यह मंत्र इस कार्य में विनियुक्त है, इसे बनाने वाले ग्रन्थ को उस मन्त्र वा मंत्र संहिता (वेद) का ब्राह्मण समझना चाहिए।"

मूलवेद के सम्बन्ध में इसी स्मृति में लिखा है:—

---

१३. आचार्य पं० सत्यव्रत जी सामश्रमी कृत "ऐतरेयालोचनम्" द्वितीय संस्करण, पृष्ठ २

१४. वही, पृष्ठ २

१५. वही, पृष्ठ २

१६. वही, पृष्ठ २

"क्षीयन्ते नैववेदाश्च नैवापि प्रभवन्ति ते।
न कश्चिद् वेदकर्त्तास्ति, वेदस्मर्ता चतुर्मुखः॥"

[बृहत्पाराशरी स्मृति १-२०]

अर्थात्—"वेद न नष्ट होते हैं और न उत्पन्न होते हैं। वेद का कर्त्ता कोई नहीं।"

महर्षि जैमिनि जी की स्पष्टोक्तिः—

"तच्चोदकेषु मन्त्राख्या॥"

[मीमांसा दर्शन २।१।३२]

अर्थ—"(तच्चोदकेषु) अग्निहोत्रादि के विधायक तथा सिद्धार्थ के प्रतिपादक वेदवाक्यों की (मन्त्राख्या) मंत्र संज्ञा माननी चाहिये।"

"शेषे ब्राह्मण शब्दः।"

[मीमांसादर्शन २।१।३३]

अर्थ –"(शेषे) मन्त्रों से अतिरिक्त मन्त्रों के व्याख्यारूप ऐतरेयादि ब्राह्मणग्रन्थ भी (ब्राह्मण-(शब्दः) ब्राह्मण संज्ञा वाले हैं।"

स्पष्टीकरण—"चारों वेदों के व्याख्यानरूप ब्राह्मणग्रन्थ हैं। ऋग्वेद का 'ऐतरेय' व्याख्यान अर्थात् ब्राह्मण है। सामवेद का 'ताण्डय' शेष अर्थात् व्याख्यान है। यजुर्वेद का व्याख्यान 'शत-पथ' और अथर्ववेद का व्याख्यान 'गोपथ' ब्राह्मण कहलाता है।"

यहां 'शेष' पद का मन्त्र से शेष का अर्थ बचा हुआ नहीं किन्तु महर्षि जैमिनी जी 'शेष' का अर्थ स्वयं निम्नलिखित सूत्रों में करते हैं:—

"अथातः शेष लक्षणम्।"

[मीमांसा दर्शन ३।१।१]

अब शेष का लक्षण कहते हैं (जिसमें 'ब्राह्मण' शब्द का व्यवहार है)।

"शेषः परार्थत्वात्।"

[मीमांसा दर्शन ३।१।२]

अर्थात्:—" 'शेष' शब्द ब्राह्मणवाची है है परार्थत्वात्—वेदार्थ के प्रतिपादक होने से। कहीं अक्षरार्थ, कहीं भावार्थ और कहीं मन्त्रों में कर्मकाण्ड में विनियोग को प्रदर्शित करता है।"

अतएव वह वेद का व्याख्यान तो है पर मूल वेद नहीं।"

यदि मीमांसाकार को 'शेष' शब्द से वेद ही अभीष्ट होता तो वे कदापि उन्हें आगे:—

"अनाम्नातेष्वमन्त्रत्वमाम्नातेषु हि विभागः।

[मीमांसा दर्शन २।१।३४]

अर्थात्—" (अनाम्नातेषु) ईश्वरोक्त न होकर ऋषिप्रोक्त होने के कारण ऐतरेयादि ब्राह्मण को (अमन्त्रत्वम्) वेदत्व नहीं है (हि) अतः उन्हें छोड़कर (आम्नातेषु) ईश्वर प्रदत्त मन्त्रों का (विभागः) विभाग कहते हैं।"

यह कह कर अग्रिम सूत्रों में ऋण्, यजु, साम भेद से स्पष्ट तीन प्रकार के मन्त्रों का विभाग दिखलाया है।

मीमांसाकार—"धर्मस्य शब्दमूलत्वाद शब्द-मनपेक्ष्यं स्यात्।" [मीमांसा दर्शन १।३।१]

इस सूत्र में शङ्का उठाकर कि—(धर्मस्य) धर्म में (शब्दमूलत्वात्) केवल वेद ही प्रमाण होने से (अशब्दम्) वेद से भिन्न ब्राह्मण ग्रन्थ (अनपेक्ष्यम् स्यात्) अप्रमाण है।"

अर्थात्—जब वेद स्वतः प्रमाण है और धर्म में केवल वे ही मूलभूत प्रमाण माने जाते हैं, तो यह बात सिद्ध हो गई कि उनसे भिन्न ब्राह्मण ग्रन्थ अप्रमाण हैं।

इसका समाधान करते हैं—

"अपि वा कर्तृसामान्यात्प्रमाणमनुमानं स्यात्।"

[मीमांसा दर्शन १। ३। २]

अर्थ—("अपि, वा) सिद्धान्त सूचक शब्द हैं। (कर्तृसामान्यात्) इत (त्त) रा के पुत्र मही-दास आदि रचे हुए ब्राह्मणादि ग्रन्थों की प्रामा-णिकता सिद्ध करने में, वेदानुकूल होने से (अनु-मानं प्रमाणस्यात्) अनुमान प्रमाण हो सकता है।"

क्रमशः

ब्राह्मण संज्ञा विवेचन

★ श्री शिवपूजन सिंह कुशवाहा एम० ए०

[गताङ्क से आगे]

अर्थात्—धर्म में वेद को स्वतः प्रमाण माना था। इससे यह नहीं कह सकते कि वेदानुकूल होते हुए भी ब्राह्मण ग्रन्थ प्रमाण नहीं है। उन्हें भी अनुमान प्रमाण के द्वारा परतः प्रमाण में माना गया है, क्योंकि ब्राह्मण ग्रन्थों के कर्ता ऋषि थे, न कि ईश्वर है।

"विरोधेत्वनपेक्ष्यं स्यादसतिह्यनुमानम्।"

[मीमांसा दर्शन १ । ३ । ३]

अर्थ—(विरोधे) वेद और ब्राह्मणों का परस्पर विरोध होने पर, ऐतरेयादि ब्राह्मण (अनपेक्ष्यम्) अप्रमाण है। (तु) किन्तु (असति, हि) अविरुद्ध होने पर निश्चय ही वह प्रमाण (स्यात्) है। ऐसा (अनुमानम्) अनुमान कर लेना चाहिये।

अर्थात्—जिस बात का वेदों में निरुपण किया है उसका प्रतिपादन न करके यदि उसके विरुद्ध प्रतिपादन करते हैं, तो वे ब्राह्मण अप्रमाण हैं। परन्तु वेदानुकूल होने पर वे प्रामाणिक कहे जा सकते हैं। 'ब्राह्मणग्रन्थ' परतः प्रमाण क्यों ? इसका समाधान अग्रिम सूत्र से होता है—

"हेतुदर्शनाच्च।"

[मीमांसा दर्शन १।३।४]

अर्थ—"(च) और ऋषि प्रोक्त होने के अतिरिक्त (हेतु दर्शनाच्च) वेद उनके हेतु हैं। इस कारण से अर्थात्—वेदों की व्याख्या रूप होने से भी अनुमान के द्वारा उन्हें परतः प्रमाण में लिया गया है।

पुनः शंका उठाते हैं कि:—

"शिष्टाकोपेऽविरुद्धमिति चेत्।"

[मीमांसा दर्शन १।३।५]

अर्थ—"(शिष्टाकोपे) उसे (ऐतरेयादि ब्राह्मण) को शिष्टों ने बिना किसी विरोध के माना है, कि (अविरुद्धम्) वह सर्वथा वेदानुकूल है।'

इसका समाधान अग्रिम सूत्र में करते हैं—

"न, शास्त्र परिमाणत्वात्।"

[मीमाँसा दर्शन १ । ३ । ६]

अर्थ—"(न) तो यह ठीक नहीं है। (शास्त्र परिमाणत्वात् क्योंकि ईश्वर रचित होने से केवल वेद ही स्वतः प्रमाण हो सकते हैं।

"मन्त्रोपदेशो वा न भाषिकस्य प्रायोपत्तेर्भाषिकश्रुतिः।"

[मीमांसा सूत्र १२।३।१७]※

इसी के भाष्य में शबर स्वामी कहते हैं:—

भाषा स्वरो ब्राह्मणे प्रवृत्तः।"

अर्थात्—"ब्राह्मण ग्रन्थों में वही स्वर प्रवृत्त हुआ है जो साधारण भाषा में है।"

※ पं० सत्यव्रत सामश्रमी जी कृत "त्रयी परिचय"; तुलना करो पं० भगवद्दत जी बी० ए० कृत "वैदिक वाङ्मय का इतिहास" भाग द्वितीय, ब्राह्मण और आरण्यक, प्रथम संस्करण पृष्ठ १२८

महर्षि कणाद का मतः—

वैशेषिकसूत्र में आया है—

"बुद्धिपूर्वावाक्यकृतिर्वेद" ॥ ६ । १ । १ ॥

"ब्राह्मणे संज्ञा कर्मसिद्धि लिङ्गम्" ॥ ६ । १ । २ ॥

"बुद्धिपूर्वो ददातिः" ॥ ६ । १ । ३ ॥

"तथा प्रतिग्रहः" ॥ ६ । १ । ४ ॥

अर्थ—"वेदों की वाक्य-रचना बुद्धिपूर्वक है। ॥ १ ॥"

"क्योंकि (वेदों का व्याख्यान करते हुए) ब्राह्मण में नामकरण-सिद्धि का चिह्न है। अर्थात्—ब्राह्मण में वेद के जिस मन्त्र का विनियोग जिस कर्म में किया है वह २ सिद्ध होता है। यदि वेद वाक्य रचना बुद्धिपूर्वक न होती तो ब्राह्मणोक्त प्रकार से वेद-प्रयोग सिद्ध न होते।

अतः ब्राह्मण वेद नहीं हैं ॥ २ ॥

इसी प्रकार ददाति अर्थात् वेद में लिखा दान-प्रयोग भी बुद्धिपूर्वक है ॥ ३ ॥

तथा प्रतिग्रह, अर्थात् दान लेना भी बुद्धि पूर्वक है ॥ ४ ॥

महावैयाकरण, आचार्य पाणिनि जी का मतः—

अष्टाध्यायी में 'कल्प, ब्रह्म, छन्द, मन्त्र' इन चार शब्दों का वर्णन आता है।

"पुराणप्रोक्तेषु ब्राह्मणकल्पेषु।"

[अष्टा० ४ । ३ । १०५]

इस वचन में 'कल्प' और 'ब्राह्मण' दो ग्रन्थों के नाम हैं। यज्ञ में वेद मन्त्रों के विवरण—अर्थ-वाद—विनियोग को वर्णन करने वाला ग्रन्थ **ब्राह्मण** कहलाता है और उनकी वैनियोगिक विधि को विशद रूप से बतलाने वाला ग्रन्थ **'कल्प'** है।

ब्राह्मण और छन्दः—

"छन्दो ब्राह्मणानि च तद्विषयाणि।"

[अष्टा० ४ । २ । ६५]

यहाँ **'छन्द'** और **'ब्राह्मण'** ये दो कहे गये हैं। छन्द अलग वस्तु है।

श्री पाणिनि जी ने 'छन्दस्' वाच्यता केवल मन्त्रों की ही मानी है, 'ब्राह्मणों' की नहीं। इस पर आचार्य **पं० सत्यव्रत जी सामश्रमी** अपने 'निरुक्तालोचन' ग्रन्थ में लिखते हैं:—

"भगवता पाणिनिनाऽपि क्वचित्प्रायोजि मन्त्रेषु एव च छन्द इति। तथाहि छन्दो ब्राह्मणानि च तद्विषयाणि, एवमादीनि समालोच्यानि। न हि तत्र छन्दः शब्दस्योभयपरत्वे ब्राह्मणानां पृथग्ग्रहणमुपपद्यते।"

यहाँ सामश्रमी जी ने 'छन्द' और 'ब्राह्मण' को पृथक् माना है।

पौराणिक पं० वेणीराम शर्मा गौड़ वेदाचार्य अष्टाध्यायी के इस सूत्र पर लिखते हैं:—"इत्यत्र मन्त्रेष्वेव छन्दश्शब्द प्रायोजि। न हि तत्र छन्दश्शब्दस्योभयपरत्वे ब्राह्मणानाम् पृथग्ग्रहणमुपपद्यते। तत्समालोचनीयम् इति दिक्।"

इन्होंने भी 'छन्द' और 'ब्राह्मण' को पृथक् माना है।

'छन्दः' का स्वरूप :—

'महाभाष्य में 'तेन प्रोक्तम्' (अष्टा० ४ । ३ । १०१) पर 'छिन्दोर्थं' इस सूत्र को पढ़ना चाहिए, ऐसा प्रसङ्ग चला कर "तत्र कृतेग्रन्थे-इत्येव सिद्धम्। ननु चोक्तं न हि छन्दांसि क्रियन्ते नित्यानि छन्दांसीति। छन्दांस्यपि क्रियन्ते। यद्यप्यर्थो नित्यः। या त्वसौ वर्णानुपूर्वी साऽनित्या। तद्भेदाच्चैतद् भवति काठके कालापकं मौदकं पैप्पलादकमिति' (महाभाष्य ४ । ३ । १०१) अर्थात्—छन्द में प्रत्यय "कृते ग्रन्थे" (अष्टा०-४ । ३ । ११६) से सिद्ध हो जायेगा। पुनः कहा गया कि छन्द तो किये—बनाये नहीं जाते हैं, छन्द नित्य हैं। उत्तर में कहा—छन्द भी किये जाते हैं यद्यपि नित्य हैं। परन्तु वर्णानुपूर्वी अनित्य है। वर्णानुपूर्वी के भेद से काठकसंहिता, कालापक-

संहिता, मौदकसंहिता, पैप्पलादसंहिता इत्यादि नाम से संहिताएँ बन गईं, अर्थात् कठ-आदिकों ने वर्णानुपूर्वी को बदल दिया, इससे उनकी बनाई हुई उक्त संहिताएँ हुईं।"

यहाँ यह स्पष्ट हो रहा है कि छन्दोविषय दो प्रकार का है। एक बिना हेरफेर वाला और दूसरा हेरफेर वाला। जो हेरफेर वाला छन्दो विषय है वह तो काठक आदि संहिताएँ हैं और दूसरा बिना हेर-फेर वाला छन्दो विषय है वेद (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद नाम से प्रसिद्ध) जिसके सम्बन्ध में महाभाष्यकार ने कहा है:—

"स्वरो नियत आम्नायेऽस्य वामशब्दस्य वर्णानुपूर्वी खल्वाप्याम्नाये नियता।"—

[महाभाष्य ५। २। ५९]

यहाँ 'आम्नाय' अर्थात् वेद में वर्णानुपूर्वी बिना हेरफेर वाली कही गई है। बिना हेरफेर वाला छन्दोविषय **'मन्त्र'** नाम से कहा जाता है।

'छन्द' और 'मन्त्र' का भेद:—

महर्षि पाणिनि कहते हैं:—

"जुष्टार्पिते च छन्दसि"

[अष्टाध्यायी ६। १। २०३, २०४]❀

'जुष्ट, अर्पित शब्दों को विकल्प से आदि उदात्त होने के लिए छन्दः सामान्य रूप से हेरफेर वालापूर्वसूत्र से था। उसमें से बिना हेरफेर वाले छन्दः में नित्य आदि उदात्त होने को मन्त्र शब्द से उत्तरसूत्र में कहा है।

यहाँ मन्त्र वस्तु-सामान्य नाम छन्दः से विशिष्ट है, इसी प्रकार—

"मन्त्रे श्वेतवहोक्थ शस्पुरोडाशोण्विन्।"

"अवे यजः॥"

"विजुपे छन्दसि॥"

[अष्टा० ३। २। ७१-७२-७३]

यहाँ पूर्वसूत्र से मन्त्र में विधि है पुनः सामान्य से छन्दः में कही है। इससे स्पष्ट हुआ कि मन्त्र नाम बिना हेरफेर वाला छन्दोभाग जिस ग्रन्थ में है, वह वेद कहलाता है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट हुआ कि बिना हेर-फेर वाला छन्दोविषय मन्त्र-भाग ऋक्, यजुः, साम, अथर्ववेद नाम से प्रसिद्ध हुआ और हेरफेर वाला छन्दोविषय काठक आदि संहिताएँ दोनों सामान्य रूप से उदाहरण काठक आदि संहिताओं में आना ही हुआ।

पं० दीनानाथ शर्मा शास्त्री सारस्वत की कल्पना—

आपने मासिक पत्रिका 'सरस्वती' प्रयाग के अगस्त १९४७ ई० में एक लेख प्रकाशित कराया था और अपने पक्ष की सिद्धि में अष्टाध्यायी के छन्दोविषयक सूत्रों 'स्नातव्यादयश्च छन्दसि' (अष्टा० ७। १। ३८)

'स्नात्वी मलादिव' (मैत्रायणी संहिता ३। ११। १११; तैत्तिरीय ब्रा० २। ४। ४। ९) में और 'चतुर्थ्यर्थे बहुलं छन्दसि' (अष्टा० २।३।६१) 'षष्ठ्यर्थे चतुर्थी' (वार्तिकसूत्रम्),

'अहल्यायैजार' (शतपथ ब्रा० ३। ३। ३। १) इस प्रकार छन्दोविषयक उदाहरणों, शाखा-संहिताओं और ब्राह्मण-ग्रन्थों में आ जाने से वे भी वेद हैं क्योंकि छन्द कहते हैं वेद को।...इससे सिद्ध होता है कि ब्राह्मण-ग्रन्थ भी वेद हैं।

समीक्षा—शास्त्रीजी क्लिष्ट कल्पना करने में दक्ष हैं।

'स्नात्व्यादयश्च छन्दसि' (अष्टा० ७। १। ३८) सूत्र का 'स्नात्वी मलादिव' (तैत्तिरीय ब्राह्मण

❀ "पाणिनीय अष्टाध्यायी सूत्रपाठः (संशोधित, द्वितीय संस्करण) पृष्ठ ५९
[रामलाल कपूर ट्रस्ट, गुरु बाजार, अमृतसर, द्वारा सन् १९५७ ई० में प्रकाशित]
अन्यों में २०९, २१० है—लेखक

२।४।६) सो यह पाठ तैत्तिरीय ब्राह्मण में 'मैत्रायणी संहिता' से लिया हुआ है। वहाँ सम्पूर्ण पाठ यों है—"द्रुपदादिवेन्मुमुचनः स्विन्तः स्नात्वी मलादिवाऽज्यं विश्वे मुचन्तुमैनसः।" (मैत्रायणी संहिता ३।११।१११) यह सम्पूर्ण वचन 'मैत्रायणी संहिता' का तैत्तिरीय ब्राह्मण में दिया हुआ है, मैत्रायणी संहिता का अनुकरण होने से तैत्तिरीय ब्राह्मण का उदाहरण न रहा, मैत्रायणी संहिता छन्दोविषय है, उसमें ऐसा होना ही था।

आपने दूसरा उदाहरण 'छन्दसि' का ब्राह्मण ग्रन्थ में बतलाया है। "चतुर्थ्यर्थे बहुलं छन्दसि" (अष्टा० २।३।६२) पर "षष्ठ्यर्थे चतुर्थी" (वार्तिक) का यथा "अहल्यायै जार" (शतपथब्रा० ३।३।३।१) आदि। परन्तु यहाँ महर्षि पतञ्जलि महाभाष्यकार ने एक व्यवस्था दी है जिससे ये छन्दोविषयक उदाहरण न होकर ब्राह्मण-विषयक हो गए। वह इस प्रकार कि इस सूत्र से पूर्व सूत्र "द्वितीया ब्राह्मणे" (अष्टा० २।३ ६०) है। पुनः "चतुर्थ्यर्थे बहुलं छन्दसि" (अष्टा० २।३।६१) है। महाभाष्यकार ने कहा है कि—

"चतुर्थी योगविभागात् सिद्धम्। 'चतुर्थी ततः "अर्थे बहुलं छन्दसि" (महाभाष्य २।३।६२) पूर्वसूत्र से ब्राह्मण में षष्ठी का विधान था, अब योग-विभाग से 'चतुर्थी' अलग सूत्र का अर्थ 'ब्राह्मण में षष्ठी-प्रसङ्ग में चतुर्थी हो' यह हुआ, जिससे ब्राह्मण में षष्ठी के स्थान में चतुर्थी होकर महाभाष्य में दिये "अहल्यायै जारः" आदि के उदाहरण बन जाते हैं। पुनः "अर्थे बहुलं छन्दसि" भाग छन्दोविषयक हो जाता है।"

ब्राह्मण ग्रन्थों के व्याख्यान होने में महर्षि यास्काचार्य की साक्षी—

"पञ्चारे चक्रे परिवर्तमाने' (ऋ० १।१६४ १३) इति। पञ्चर्तुतया, पञ्चर्तवः संवत्सरस्य इति च ब्राह्मणम्'…।"

[निरुक्त नगम काण्ड ४, खं० २७]

यहाँ ब्राह्मण में वेद के 'पञ्चारे' का अर्थ वर्ष की पाँच ऋतुएँ अपने को वेद से भिन्न सिद्ध करता है।

"द्वादश प्रधयश्चक्रमेकं" (ऋ० १।१६४।४८) तस्मिंत्साकं त्रिशङ्कवोऽर्पिताः षष्ठिर्न चलाचलासः षष्ठिश्चह वै त्रीणि च शतानि संवत्सरस्याहोरात्राः। इति च ब्राह्मणम्।"

[निरुक्त ४, नैगमकाण्ड २७]

यहाँ निरुक्तकार ने वेद के ३६० शंकुओं का अर्थ ब्राह्मण ग्रन्थ में किए 'वर्ष के ३६० दिन-रात दर्शाये हैं।

इससे वेद के व्याख्यान-ग्रन्थ ही ब्राह्मण सिद्ध होते हैं, वेद नहीं।

"चत्वारो वा इमे वेदा ऋग्वेदो यजुर्वेदः साम वेदो ब्रह्मवेदः (अथर्ववेदः) इति—

[गोपथब्रा० पू० २।१६]

यहाँ ब्राह्मण ग्रन्थ अपने से भिन्न वेदों की ओर संकेत करता है कि 'इमे' ये ऋग्वेदादि चार वेद हैं।

'शतपथ ब्राह्मण' में वेद-मन्त्रों की व्याख्या करते हुए ग्रन्थकार ने अनेक स्थलों को यह कह कर छोड़ दिया कि "नात्र तिरोहितमिवास्ति" अर्थात्—मन्त्र का जितना अंग जटिल था उसकी व्याख्या हमने कर दी, शेष स्पष्ट है।

यह "नात्र तिरोहितमिवास्ति" शतपथ ब्रा० के निम्नलिखित स्थानों में हैं। का. १, अ. १, ब्रा. १, क. ३, अ. ३, ब्रा. १, क. १६। का. ३, अ. ६, ब्रा. ३ क. १४।; का. १४, अ. १, ब्रा. ३ का. १०, ११।;"

शतपथ ब्रा० में 'व्याख्यान' शब्द भी स्पष्ट है:—

"तददस्तद् दिवाकीर्त्यानाम् ब्राह्मणे व्याख्यायते यथा तद् यक्षस्य शिरः प्रतिदधतुः।"

[का. ४ अ. १ ब्र. ५ १५]

अन्यत्र भी देखिए—कां. १ अ. ६ ब्रा. १ क.

७ का. ३ अ. १ ब्रा. ३ क. १ ।; व का. ४ अ. १ ब्रा. ५ क. १५।"

पौराणिक पं. अखिलानन्द शर्मा कविरत्न ने 'वैदिक सत्यार्थप्रकाश' में संहिता व ब्राह्मण दोनों को वेद माना है **'अथर्ववेदालोचन'**[1] में वेद और ब्राह्मण को पृथक् माना है। आप उसमें लिखते हैं—"......विधिशब्दाच्च (पू० मी० १।२।५३)

इस सूत्र के भाष्य में शबरस्वामी ने [मन्त्र-व्याख्यानरूपो ब्राह्मण्यत: शब्दो विधिशब्द इत्युच्यते] इस प्रकार लिखते हुए ब्राह्मण को **मन्त्र का व्याख्यान माना है।**

यजुर्वेद के प्रातिशाख्य' में [ॐकारं वेदेषु १८ अथकारं भाष्येषु १९]

यह लिखते हुए 'कात्यायन' ने भी वेद और ब्राह्मण को भिन्न २ माना है।

विनियोक्तव्यरूपो य: स मन्त्र इति चक्षते।
विधिस्तुतिकरं शेषं ब्राह्मणं कथयन्ति हि।

यह पद्य 'सर्वानुक्रमणीवृत्ति भूमिका' में है। इसका अभिप्राय यह है कि कर्मों में विनियोग बतलाने वाला मन्त्र होता है और विधि तथा स्तुति के बतलाने वाले शेष भाग को ब्राह्मण कहते हैं। यहाँ पर भी दो विभाग स्पष्ट रूप से विभक्त हैं।

शेषे ब्राह्मणशब्द २।१।३३ अथात: शेष लक्षणम् ३।१।१ शेष: परार्थत्वात् ३।१।२ (पू० मी०)

मीमांसादर्शन के इन सूत्रों में ब्राह्मण को शेष भाग बताया गया है। दूसरे के अधीन चलने के कारण इसका नाम शेष है। **व्याख्यान मूल पर होने से मूल नहीं माना जा सकता है।** ब्राह्मणादि ग्रन्थों के न मानने पर वानप्रस्थ और संन्यास ये दो आश्रम, जिनका किसी वेद-मंत्र में देवतात्वेन वर्णन नहीं है, उपादेय नहीं हो सकते हैं।

हमारी अनुमति में तो **जहाँ वेद का साक्षात् विरोध हो वहाँ ब्राह्मण ग्रन्थ मानने योग्य नहीं हैं,** परन्तु जहाँ विरोध न हो, वहाँ पर ऋषियों के ब्राह्मणादि वाक्य भी अवश्य मानने योग्य हैं।"

कतिपय अन्यान्य विद्वानों के मत: —

श्री देवराजजी, प्रयाग विश्वविद्यालय, प्रयाग लिखते हैं: —

"स्वामी दयानन्द के मत में ब्राह्मण भी वेद नहीं हैं। **वास्तव में ब्राह्मण-ग्रन्थ वेदों की सबसे प्राचीन व्याख्याएँ या टीकाएँ हैं।** आधुनिक स्कॉलर भी संहिता-भाग को ही वेद नाम से पुकारते है।"[2]

यहाँ पर लेखक 'वास्तव' शब्द लिख कर अपना स्पष्ट मत प्रकट करता है कि ब्राह्मण ग्रन्थ व्याख्याएँ हैं।

जययुर राज्य के राज्य-पण्डित श्रीयुत **पं० मधुसूदन शर्मा** ने भी अपने 'वेदधर्म व्याख्यान' नामी निबन्ध में सिद्ध किया है कि "ऋगादि मन्त्र ही अपौरुषेय हैं और ब्राह्मण मनुष्यकृत हैं।"[3]

इटावा-निवासी **पं० भीमसेन शर्मा वेद व्याख्याता** ने गुजरानवाला में जैनियों के साथ शास्त्रार्थ करते समय ब्राह्मण-ग्रन्थों का प्रमाण न मानते हुए लिखा था कि "पहिले मूल वेद का कोई मन्त्र लिख के उसके सीधे-सीधे उत्तारार्ध लिखकर यह दिखाओ कि, मनुष्य को मारने, काटने और होम में चढ़ाने की आज्ञा कहाँ है? मूल वेद में ही

---

१. हिन्दी प्रेस, प्रयाग में मुद्रित और लेखक द्वारा ही प्रकाशित, अवतरणिका पृष्ठ ३४-३५।

२. 'भारतीय दर्शन-शास्त्र का इतिहास', प्रथम संस्करण, पृष्ठ ४१।

३. 'वैदिक सम्पत्ति' द्वितीय संस्करण, पृष्ठ ५५२-५५३।

गौ को मारने-काटने की आज्ञा दिखाओ। और जब तक यह न दिखा दो कि नरमेध, गौमेध (मनुष्य, गौ का मारना) मूलवेद में नहीं है तब तक अन्य का प्रमाण नहीं माना जावेगा।"४

श्री सी० एस० निवासाचारी एम० ए० तथा श्री एस० एस० रामस्वामी आयंगर एम० ए० लिखते हैं—

"प्रत्येक वेद के साथ ब्राह्मण-ग्रन्थ सम्बद्ध कर दिए गए हैं जिनमें संहिताओं में वर्णित पूजा-पद्धतियों तथा अन्य विधियों की विस्तार के साथ टीका और व्याख्या की गई है। ब्राह्मण-ग्रंथों में प्राचीनतम वैदिक गद्य के उदाहरण हैं।"५

आचार्य श्री चतुरसेनजी शास्त्री लिखते हैं—

"....उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त में ऋषि दयानन्द ने साहसपूर्वक यह घोषणा की कि ब्राह्मण-ग्रन्थ वेद नहीं हैं। फिर धीरे-धीरे योरोपीय विद्वानों ने वैदिक अनुसन्धान की ओर ध्यान दिया और अब तो प्रायः सभी पक्षपात-शून्य विद्वान् इस बात को स्वीकार करते हैं। वास्तव में वैदिक साहित्य भी इस बात को प्रमाणित करता है कि ब्राह्मण वास्तव में वेद नहीं हैं।"...६

उपर्युक्त छः विद्वान् आर्यसमाजी नहीं हैं पर वे ब्राह्मणग्रन्थों को वेद नहीं मानते हैं। इसी प्रकार सभी निष्पक्ष विचारधारा के विद्वानों के मत हैं। पौराणिक संस्कार के दोष से तथा संकुचित विचारधारा वाले कतिपय विद्वान् ही ब्राह्मण ग्रन्थों को वेद स्वीकार करते हैं जो उनका हठ-मात्र है।

"मन्त्रब्राह्मणयोर्वेदनामधेयम्" पर विचारः—

पं० दीनानाथ शर्मा शास्त्री का मत है कि "निरुक्त में भी 'ग्नास्त्वाऽकृन्तन्नपसोऽतन्वत' इत्यपि निगमो भवति (निरुक्त ३।२१।२) को लेकर कहा है कि यह पाठ प्रसिद्ध चार वेदों में नहीं है, किन्तु मैत्रायणी संहिता (१।९।४) और ब्राह्मण-ग्रन्थ में है। इससे सिद्ध होता है कि ब्राह्मण-ग्रन्थ वेद है।"

निरुक्त में कहा है कि:—निघण्टवः कस्मान्निगमा इमे भवन्ति छन्दोभ्यः समाहृत्य समाहृत्य समाम्नाताः" (निरुक्त १।१) निघण्टु (निघण्टु के शब्द) निगम हैं वे छन्दों अर्थात् बिना हेरफेर वाले ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद नाम से प्रसिद्ध छन्दोविषय और हेरफेर वाले काठक आदि संहिता रूप छन्दोविषय से चुन-चुन कर संगृहीत किए गए हैं तब "ग्नास्त्वाऽकृन्तन्नपसोऽतन्वत" पाठ हेरफेर वाले छन्दोविषय मैत्रायणी-संहिता (१।९।४) का देकर निरुक्त का "इत्यपि निगमो भवित" (निरुक्त ३।२१।२) का कथन करना तो सार्थक है ही। पुनः इस पाठ का ब्राह्मण में आना मैत्रायणीसंहिता का अनुकरण पाठ हुआ, निजी नहीं।"

यदि यह मान लिया जाय कि यह कात्यायन ऋषि का वचन है परन्तु यह कथन परम्परा का अनुवचन नहीं है। वेद किसे कहते हैं, यह प्रकट किया जा रहा हो कि मन्त्र और ब्राह्मण को वेद कहते हैं, वेद के सम्बन्ध में संशय-प्रसङ्ग उठा हुआ हो, जिसके समाधान में उक्त कथन हो, ऐसा समझना भूल है।

महर्षि यास्क कहते हैं—"कर्म सम्पत्तिर्मन्त्रो वेदे।" (निरुक्त १।१)

यहाँ स्पष्ट है कि मन्त्रात्मक भाग वेद है ब्राह्मण नहीं।

महर्षि कपिल कहते हैं:—

"न पौरुषेयत्वं वेदानां तत्कर्तुः पुरुषस्याभावात्।"

[सांख्यदर्शन ५।४६]

अर्थात्—"जिसका रचयिता मनुष्य नहीं, वे वेद अपौरुषेय हैं।"

ब्राह्मणादि तो याज्ञवल्क्य आदि ऋषियों के बनाये ग्रन्थ हैं तब वे महर्षि कपिल की दृष्टि में वेद नहीं हैं।

---

४. 'भीमज्ञानत्रिंशिका का परिशिष्ट' पृष्ठ ३, तुलना करो 'वैदिक सम्पत्ति' द्वितीय संस्करण, पृष्ठ ५५३।

५. 'प्राचीन भारत' (हिन्दूकाल) प्रथम संस्करण, पृष्ठ ४३।

६. "वेद और उनका साहित्य" पृष्ठ १०६ [सन् १९३६ ई० प्रथमावृत्ति, इन्दौर]

ब्राह्मण संज्ञा विवेचन

★ श्री शिवपूजन सिंह कुशवाहा एम० ए०

[फरवरी अङ्क से आगे]

महर्षि पतञ्जलि लिखते हैं—

"केषां शब्दानाम् लौकिकानां वैदिकानां च। वैदिकाः खल्वपि शन्नो देवीरभिष्टये। इषेत्वोर्जेत्वा। अग्निमीळे पुरोहितम्। अग्न आयाहि वीतये"

महाभाष्य १।१।१॥

यहाँ भाष्यकार ने वैदिक शब्दों के प्रसङ्ग में ऋग्वेदादि नाम से प्रसिद्ध चार वेदों के ही उदाहरण दिए ब्राह्मण ग्रन्थों के नहीं। उनकी दृष्टि में ऋग्वेद आदि चार ही वेद हैं ब्राह्मण नहीं, यह स्पष्ट सिद्ध होता है।

इस प्रकार "मन्त्र ब्राह्मणयोर्वेद नामधेयम्" मन्त्र और ब्राह्मण वेद हैं यह कथन परम्परा का अनुवचन नहीं है। ब्राह्मण ग्रन्थों का वेद होना किसी भी ऋषि व अर्वाचीन विद्वानों ने भी स्वीकार नहीं किया कह उपर्युक्त प्रमाणों से सिद्ध हो गया। अतः कात्यायन का कथन परम्परा का अनुवचन न रहा।

कात्यायन ऋषि का 'ब्राह्मण' को वेद नाम देना भी ऐसा ही हुआ जैसे अन्यों ने वेद से भिन्न अन्य ग्रन्थों के नाम वेद और संहिता दिए हुए हैं—

'गोपथ ब्राह्मण १।१० में प्रसिद्ध चार वेदों के अतिरिक्त पांच प्रकार के अन्य वेदों का वर्णन है। वहाँ लिखा है कि—

"ताभ्यः पंचवेदान्निरमियत। सर्पवेदं पिशाचवेदमसुरवेदमितिहासवेदं पुराणवेदमिति।"

अर्थात्—उससे सर्पवेद, पिशाचवेद, असुरवेद, इतिहास वेद और पुराणवेद निर्माण हुए।

यहाँ पुराण और इतिहास भी वेद कहे गए हैं जो वास्तव में वेद नहीं हैं। नाट्यशास्त्र के आचार्य ने नाट्यशास्त्र को "नाट्यवेद" कहा है:—

"सङ्कल्प भगवानेहं सर्ववेदाननुस्मरन्।
नाट्यवेदं ततश्चक्रे चतुर्वेदाङ्ग सम्भवम्॥
जग्राह पाठ्यं ऋग्वेदात्सामेभ्यो गीतमेवच।
यजुर्वेदादभिनयान् रसानाथर्वणादपि।"

नाट्य शास्त्रम्[1]

अर्थात्—"चरों वेदों से सङ्कलन करके भगवान् ने नाट्यवेद बनाया। ऋग्वेद से पाठ लिया; सामवेद से गीत लिया, यजुर्वेद से अभिनय लिया, और अथर्ववेद से रसों का ग्रहण किया।"

इस प्रकार कात्यायन ऋषि का ब्राह्मण को वेद नाम देना कोई महत्वपूर्ण व प्रामाणिक बात नहीं हुई।

कात्यायन ऋषि ब्राह्मण को वेद नाम देकर दृढ़ रहे हों ऐसा भी नहीं है।

"ऋग्वेदीय सर्वानुक्रमणी" में तो उन्होंने उक्त प्रतिज्ञा के विरुद्ध ही कथन किया है—

"अथ ऋग्वेदाम्नाये शाकलके सूक्तप्रतीक-ऋक्संख्यऋषिदैवतछन्दांस्यनुक्रमिष्यामो मन्त्राणां ब्राह्मणार्षेयच्छन्दो दैवतविद् याजनाध्यापनाभ्यां श्रेयोऽधिगच्छतीति।"

[कात्यायन कृत "ऋग्वेदीय सर्वानुक्रमणी]

१. "वैदिक सम्पत्ति" द्वितीय संस्करण, पृष्ठ ५५०।

यहाँ कात्यायन मुनि ने लिखा है कि मन्त्रों के ब्राह्मण [ब्रह्मवेद, वेद से प्रसिद्ध क्रिया जानने वाला विनियोग आदि कर्म विधि प्रदर्शक विषय] ऋषि विषय, देवता विषय और छन्दः इन चारों बातों को जानने वाला याजन (यज्ञ कराने) और अध्यापन के द्वारा श्रेय को प्राप्त करता है।"

अब यहाँ विचार करें कि मन्त्रों को पढ़ाने और उससे यज्ञ कराने के लिए छन्दः देवता, ऋषि और विनियोग आदि कर्मविधि का जानना आवश्यक बतलाया है जब कि मन्त्रों के छन्दः प्रतिपादक पिङ्गल छन्दः सूत्र आदि ग्रन्थ वेद नहीं देवता प्रतिपादक बृहद्देवता आदि ग्रन्थ वेद नहीं, ऋषि प्रतिपादक आर्षेयानुक्रमणी ग्रन्थ वेद नहीं, तब उसी प्रकार मन्त्रों के विनियोग आदि कर्म विधि प्रतिपादक शतपथ, ऐतरेय आदि ब्राह्मण ग्रन्थ कैसे वेद हो सकते हैं? इसी प्रकार उक्त "मंत्र ब्राह्मणयोर्वेदनामधेयम्" कथन और भी निःसार हो जाता है।

"मन्त्र ब्राह्मणयोर्वेदनामधेयम्" के सम्बन्ध में यह सम्भव है कि उक्त कथन कात्यायन के नाम से किसी ने प्रक्षेप कर दिया हो कारण कि 'ऋग्वेदीय सर्वानुक्रमणी' में कात्यायन, ब्राह्मण से भिन्न मन्त्र भाग को वेद कहता है, ब्राह्मण को वेद नहीं "अथ ऋग्वेदाम्नाये ऋङ्मन्त्र भाग को 'ऋक प्रतिशाख्य के समान वेद शब्द से कहता है 'ऋङ्मन्त्राम्नाय' नहीं कहता और ऋग्वेद के मन्त्रों से भिन्न ब्राह्मण का नाम आर्षेय दैवत आदि के साथ रखता है। 'ऋक् प्रातिशाख्य' में कहा है—

"ऋचां समूह ऋग्वेदस्तमभ्यस्य प्रयत्नतः पठितः शाकलेनादौ" [ऋक् प्रातिशाख्यम्]

इससे मन्त्र भाग ही वेद है यह निश्चित हुआ। कात्यायन मुनि कहते हैं—

"ओङ्कारं वेदेषु ॥ ११।८ ॥ अथकारं भाष्येषु ॥११।१९॥" [यजुर्वेद के प्रातिशाख्य]

अर्थात्—"वेद मन्त्र 'ओङ्कार' से और भाष्य वेदभाष्य (ब्राह्मण) 'अथ' शब्द से आरम्भ होते हैं।"[२]

यदि कात्यायन के मत में वेद तथा ब्राह्मण एक ही होते तो वेद का आरम्भ 'ओङ्कार' से तथा ब्राह्मण का आरम्भ 'अथ' से यह भेद क्यों करते? इसलिए कात्यायन आदि ऋषियों के मन में "ब्राह्मण वेद नहीं" यह निर्विवाद है।

"आपस्तम्ब परिभाषासूत्र ३४ में "मन्त्र ब्राह्मणयोर्वेदनामधेयम्" है पर आपस्तम्ब की यज्ञ परिभाषा में यदि मन्त्र तथा ब्राह्मण की वेद संज्ञा की गई है तो यह केवल एक पारिभाषिक संज्ञा हुई। पारिभाषिक संज्ञा (Technical Term) सदा कल्पित होते हैं वास्तविक नहीं। आपस्तम्ब की यज्ञसूत्र की परिभाषा में वेद शब्द ब्राह्मण तथा मन्त्र का वाचक होगा **सर्वत्र नहीं।**

इतने मात्र से ब्राह्मण ग्रन्थ वेद कदापि नहीं हो सकते कारण कि पारिभाषिक शब्द तो प्रत्येक शास्त्र के विलक्षण ही होते हैं परन्तु उनका सर्वत्र अन्य शास्त्रों में भी उसी अर्थ में प्रयोग करना कदापि ग्राह्य नहीं हो सकता। उदाहरणार्थ व्याकरण की परिभाषा में 'अदेङ्गुणः' (अष्टा० १। १।२) अ, ए, ओ, को 'गुण' कहते हैं। वैशेषिक दर्शन (१।१।६) में रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, संख्या परिणामादिक को ही गुण माना है। सांख्य दर्शन में सत, रज, तम को ही गुण कहते हैं।

एक ही 'गुण' शब्द भिन्न २ परिभाषाओं में भिन्न-भिन्न अर्थ का द्योतक हो जाता है। परिभाषा के बल से एक शब्द कितने ही वाच्यों का द्योतक हो जाता है किन्तु सर्वत्र उसका वही अर्थ

२. "वेद तत्त्वालोचन" प्रथमावृत्ति, पृष्ठ ५७ तथा "अथर्ववेदालोचन" प्रथम संस्करण, पृष्ठ ३४।

हो यह कदापि युक्तियुक्त नहीं हो सकता। इसलिए यदि यज्ञ परिभाषा में वेद से ब्राह्मण ग्रन्थों का ग्रहण किया भी हो तो उतने मात्र से क्या ब्राह्मण वेद हो जायेंगे? कदापि नहीं।

उक्त 'आपस्तम्बीय परिभाषा' की व्याख्या में **श्री धूर्त स्वामी लिखते हैं—**

"कैश्चित् मन्त्राणामेव वेदत्वमाश्रितम् ॥२४॥"

पूर्वोक्त सूत्र की व्याख्या में **श्री हरिदत्त मिश्र** भी यही कहते हैं—

"कैश्चिन्मन्त्राणामेव वेदत्वमाख्यातम् ॥३३।"

अर्थात्—"कई एक आचार्य मन्त्रों को ही वेद मानते हैं।"

इस लेख से प्रकट होता है कि श्री धूर्त स्वामी और श्री हरिदत्त मिश्र की दृष्टि में आपस्तम्ब के 'यज्ञ-परिभाषा' में ऐसा लिखा है। इसका तो केवल यही अर्थ हुआ कि आपस्तम्ब कुछ यज्ञ सम्बन्धी परिभाषाएँ अपने ग्रन्थ के लिए बना रहे थे। उसमें उनको मन्त्रों के भी प्रमाण देने थे और ब्राह्मणों के भी। अतः पारिभाषिक रीति से उन्होंने लिख दिया कि जहाँ कहीं हम 'वेद' शब्द का प्रयोग करें वहाँ मन्त्र और ब्राह्मण दोनों का अर्थ लेना चाहिए। इसका यह अर्थ नहीं कि मन्त्र और ब्राह्मण एक हैं या उनमें तादात्म्य है। वेद तो मन्त्र ही हैं, परन्तु परिभाषा के लिए ब्राह्मणों की भी वेद संज्ञा मान ली गई।..."[3]

ब्राह्मण ग्रन्थ ऋषियों की कृतियाँ हैं

चारों वेदों के चार प्रमुख ब्राह्मण हैं। ऋग्वेद का "ऐतरेय ब्राह्मण, यजुर्वेद का शतपथ ब्राह्मण सामवेद का "ताण्ड्य ब्राह्मण" और अथर्ववेद का 'गोपथ' ब्राह्माण है।

ऋग्वेदीय ब्राह्मण—(१) ऐतरेय ब्राह्मण इसके प्रवक्ता महिदास ऋषि थे।

आचार्य पं० सत्यव्रत जी सामश्रमी[4] लिखते हैं—

..."कोऽस्य प्रवक्तेति? महिदास इति विश्रुतः।

तथाह्यारण्यकम्—"एतद्धस्मवै वद् विद्वानाह महिदास ऐतरेयः"

इति (ऐ० आ० १।८।२)। छान्दोग ब्राह्मणेऽप्येवमेव (५।१६।७)। तत्र "महिदासो नामतः, इतराया अपत्यमैतरेयः"—इति शाङ्कर भाष्यम्। अप्यस्य भाष्यभूमिकायाञ्चालेखि सायणेनैवम्—"प्रकृतस्य तु ब्राह्मणस्यैतरेयकत्वे सम्प्रदायविद एतामाख्यानिकामाचक्षते।" कस्यचित् खलु महर्षेः बह्वाः पत्न्यो विद्यन्ते स्म। तासां मध्ये कस्याश्चिदितरेति नामधेयम्। तस्या इतरायाः पुत्रो महिदासाख्यः कुमारः।

तदीयस्य तु पितुर्भार्भान्तिर पुत्रेष्वेवस्नेहातिशयो न तु महिदासे। ततः कस्याश्चिद् यज्ञसभायां स महिदासमवज्ञायान्यान् पुत्रान् स्वोत्सङ्गे स्थापयामास। तदानीं खिन्नवदनं महिदासमवगत्येराख्या तन्माता स्वकीयकुलदेवतां भूममभिसस्मार। सा च भूमि देवता दिव्य मूर्त्तिधरा सती यज्ञसभायां समागत्य महिदासाय दिव्यं सिंहासनं दत्त्वातत्रैनमुपवेश्य सर्वेष्वपि कुमारेषु पाण्डित्याधिक्यमवगमय्यैतद् ब्राह्मण प्रतिभासनरूपं वरं ददौ। तदनुग्रहात् तस्य महिदासस्य मनसः 'अग्निर्वैदेवानामवमः (ऐ० ब्रा० १।१।१) "इत्यादिकं स्तृणुते" (ऐ० ब्रा० ८।५।५) इत्यन्तं चत्वारिंशदध्यायोपेतं ब्राह्मणं प्रादुरभूत।"

अर्थात्—"...इसका प्रवक्ता कौन है? महिदास।

आरण्यक में भी कहा है—'यह जो महिदास विद्वान् था वह इतरा का पुत्र था।'

छान्दोग ब्राह्मण के शाङ्कर भाष्य में लिखा

३. पं० गङ्गाप्रसाद उपाध्याय एम० ए० "सायण और दयानन्द" प्रथम संस्करण, पृष्ठ २७

४. "ऐतरेयालोचनम्" द्वितीय संस्करण, पृष्ठ ११-१२।

है—'महिदास नाम से, इतरा का अपत्यवाचक ऐतरेय हुआ।

इसकी भाष्य भूमिका में सायण लिखते हैं—किसी 'खलु' नाम के महर्षि की बहुत सी स्त्रियाँ थीं। उनमें एक इतरा नाम की भी स्त्री थी। उस इतरा का एक महिदास नाम का कुमार था। इस माता को छोड़कर पिता का अन्य पुत्रों पर अधिक प्रेम था महिदास पर न था। किसी यज्ञ सभा में महिदास का अपमान करके उसके दूसरे भाइयों को स्थापित किया। महिदास को खिन्न वदन देखकर उसकी माता इतरा अपने कुल देवता की भूमि में चली गई। फिर वह भूमि देवता दिव्य मूर्ति धारण करके और महिदास के समीप आकर, दिव्य आसन देकर और उस महिदास को बिठाकर तू सब कुमारों में श्रेष्ठ हो जायेगा ऐसा उसको सुन्दर वरदान दिया। उस वर के अनुग्रह से महिदास के मन से "अग्निर्वैदेवानामवमः' से लेकर "स्तृणुते" यहाँ तक चालीस अध्याय युक्त ब्राह्मण प्रादुर्भूत हुआ।"

"इतरा" का अर्थ—"इतरस्त्वन्यनीचयोः" अमर कोषे।

'इतरा' का अर्थ है नीच अर्थात् जाति की दासी थी।

श्री सामश्रमी जी के लेख की पुष्टि में पौराणिक **पं० अखिलानन्द शर्मा 'कविरत्न'** लिखते हैं—"ऐतरेय ब्राह्मण इतरा नामक ऋषि पत्नी के महिदास नामक पुत्र ने बनाया है ऐसा उनकी भूमिका में सायाण लिखते हैं। "ऐतरेयालोचन" में सामश्रमी भी ऐसा ही मानते।"[५]

एवं, पुनः आप लिखते हैं—"जब ऐतरेय ऋषि ने ऋग्वेद का ऐतरेय ब्राह्मण लिखा था।"[६]

पं० भगवद्दत्त जी बी० ए० लिखते हैं—"उस परम्परा के अनुसार जो सायण को ज्ञात थी, इस ब्राह्मण का प्रवक्ता महिदास ऐतरेय है। इस बात के मानने में अणुमात्र भी आपत्ति नहीं कि महिदास ही ने इन चालीस अध्यायों का सङ्कलन किया।"[७]

पं० बलदेव उपाध्याय एम. ए., साहित्याचार्य वाराणसी लिखते हैं कि—

"ऋग्वेदीय ब्राह्मणों में सर्व प्रथम उल्लेखनीय ब्राह्मण है ऐतरेय ब्राह्मण। इसके रचयिता ऋषि महिदास ऐतरेय माने जाते हैं। इस नाम की व्युत्पत्ति के आधार पर सायणाचाय ने अपने भाष्य के आरम्भ में एक कथानक दिया है जिसके अनुसार वे किसी शूद्रा इतरा के पुत्र थे।"[८]

शतपथ ब्राह्मण के कर्त्ता

महर्षि याज्ञवल्क्य जी हैं।

महर्षि वेद व्यास कहते हैं—

"ततः शतपथं कृतस्नं सरहस्यं ससंग्रहम्।

चक्रे सपरिशेषं चहर्षेण परमेणह ॥१६॥"

—[महाभारत, शान्तिपर्व, अध्याय ३२३, कुम्भकोणम् संस्करण]

अर्थात्—याज्ञवल्क्य ने परिशेष, संग्रह और रहस्य युक्त सम्पूर्ण शतपथ को बनाया।"

"इति ह स्माह याज्ञवल्क्यः।"
[शतपथ ब्रा० ३।१।३।१]

"सहो वाच याज्ञवल्क्यः।"
[शतपथ ब्रा० १२।६।३।२]

"तदुहोवाच याज्ञवल्क्यः।"
[शतपथ ब्रा० १।३।४।२१; २।३।१।२१; २।४।३।२, १२।४।१।१०;]

५. "अथर्ववेदालोचन" प्रथम संस्करण, पृष्ठ ३३

६. वेदत्रयीसमालोचना" पृष्ठ २१ तुलना करो पं० शिवशर्मा जी महोपदेशक कृत "सत्यार्थ निर्णय" प्रथम खण्ड, प्रथम संस्करण, पृष्ठ २२५.

७. "वैदिक वाङ्मय का इतिहास" द्वितीय भाग, प्रथम संस्करण, पृष्ठ ६

८. "वैदिक साहित्य और संस्कृति" प्रथम संस्करण, पृष्ठ २०५।

यह लेखक की स्वयं साक्षी है कि शतपथ उसकी कृति है।

राव बहादुर श्री चिन्तामणि विनायक वैद्य, एम. ए. एल. एल. बी. लिखते हैं—

"...शतपथ ब्राह्मण याज्ञवल्क्य ने बनाया है। ...यह ब्राह्मण भारती युद्ध के पश्चात् रचा गया है।"[९]

पं० प्रियव्रत जी वेदवाचस्पति आचार्य गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय लिखते हैं—"वेदों की उत्पत्ति के सम्बन्ध में **शतपथ ब्राह्मण के कर्त्ता** महर्षि याज्ञवल्क्य एक दूसरे स्थान पर लिखते हैं...।"[१०]

पौराणिक पं० मोतीलाल जी शास्त्री जयपुर लिखते हैं—"शतपथ के द्रष्टा याज्ञवल्क्य हैं।[११]

कविरत्न पं० अखिलानन्द शर्मा, अनूपशहर लिखते हैं—"शतपथ ब्राह्मण याज्ञवल्क्य ने बनाया ऐसा पतञ्जलि कहते हैं।"[१२]

पं० बलदेव उपाध्याय एम० ए०, साहित्याचार्य लिखते हैं—"प्रथम काण्ड पञ्चक में याज्ञवल्क्य था, जो चतुर्दश काण्ड में समस्त शतपथ के कर्त्ता माने गए हैं, प्रामाण्य सर्वातिशायी है।"[१३]

ताण्ड्य ब्राह्मण के कर्त्ता

"साम विधान ब्राह्मण २। ९३॥ के अनुसार **ताण्डि** नाम का एक आचार्य हुआ है। शतपथ ६।१।२।२५॥ में 'अथ ह स्माह ताण्ड्यः' कहा है।

अर्थात्—ताण्ड्य बोला। इस ताण्डिय आचार्य ने **ताण्ड्य ब्राह्मण** का प्रवचन किया था।"[१४]

पं० शिवशर्मा जी महोपदेशक लिखते हैं—"ताण्ड्य महा ब्राह्मण के प्रकाशक अपनी प्रस्तावना में लिखते हैं—"तण्डि" नामक कश्चित् सामगाचार्य आसीत् तेन लोके प्रचारित्वादिदं तांड्यमुच्यते। ताण्ड्य भाष्य के विज्ञापन के पृष्ठ २ पर देखो। ज्ञात होता है कि जिस प्रकार इतरा के पुत्र ऐतरेय का बनाया हुआ होने से ऐतरेय ब्राह्मण कहाया, वैसे ही 'तण्डि' का कहा ताण्ड्य ब्राह्मण कहाता है।"[१५]

षड्विंश ब्राह्मण का कर्त्ता

"षड्विंश तथा सामवेद की प्रधान शाखा कौमुदी से सम्बन्ध रखने वाले अगले छः ब्राह्मण भी **तण्डि** अथवा उसी के निकटवर्ती शिष्यों के प्रवचन किए हुए हैं।"[१६]

गोपथ ब्राह्मण के कर्त्ता

पं० बलदेव उपाध्याय एम० ए०, साहित्याचार्य का मत है कि—"गोपथ ब्राह्मण' के रचयिता निश्चय ही 'गोपथ' ऋषि हैं। अथर्ववेदीय ऋषियों की नामावली में 'गोपथ' का नाम आता है।"[१७]

---

९. "महाभारत-मीमांसा" पृष्ठ ४३५ [सन् १९२० ई०, श्री बालकृष्ण पाण्डुरंग ठकार, ग० व० चिपलूणकर मण्डली के स्वामी, बुधवारपेठ न० १७३ पूना द्वारा प्रकाशित]

१०. "वेद का राष्ट्रीय गीत" प्रथम संस्करण, भूमिका, पृष्ठ १।

११. "शतपथ ब्राह्मण भाषा भाष्य" पृष्ठ ६४ तुलना करो "पं० शिवशर्मा जी कृत "शास्त्रार्थ महारथी" प्रथम भाग प्रथम संस्करण पृष्ठ २६०

१२. "अथर्ववेदालोचन" प्रथम संस्करण, पृष्ठ ३३।

१३. "वैदिक साहित्य और संस्कृति" प्रथम संस्करण पृष्ठ २१२।

१४. "वैदिक वाङ्मय का इतिहास" द्वितीय भाग, प्रथम संस्करण, पृष्ठ १५।

१५. "शास्त्रार्थ-महारथी" प्रथम संस्करण पृष्ठ २६४।

१६. "वैदिक वाङ्मय का इतिहास" द्वितीय भाग, प्रथम संस्करण, पृष्ठ १७।

१७. "वैदिक साहित्य और संस्कृति" प्रथम संस्करण, पृष्ठ २३३।

ब्राह्मण संज्ञा विवेचन

★ श्री आचार्य शिवपूजन सिंह कुशवाहा एम० ए०

[गताङ्क से आगे]

योरोप और भारत में उपलब्ध ब्राह्मणों के जो संस्करण निकले हैं उनकी सूची इस प्रकार है:—

ऐतरेय ब्राह्मण—में आठ पञ्चिकायें हैं। प्रत्येक पञ्चिका में पाँच अध्याय हैं। कुल मिलाकर सारे ब्राह्मण में चालीस अध्याय हैं।

इस ब्राह्मण का प्रचार अत्यधिक तुङ्गभद्रा, कृष्णा और गोदावरी (नासिक आदि महाराष्ट्र राज्य) वा सह्याद्रि से लेकर आन्ध्र में था और अब भी है।

(क) ऐतरेय ब्राह्मण-सायण भाष्य सहित, सम्पादक पं० काशीनाथ शास्त्री, आनन्द आश्रम, पूना, सन् १८९६ ई०, खण्ड १ व २।

(ख) ऐतरेय ब्राह्मण सायण भाष्य साहित—पण्डित सत्यव्रत सामश्रमी द्वारा सम्पादित, एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बङ्गाल, कलकत्ता, संवत् १९५२-१९६२, भाग ४।

(ग) ऐतरेय ब्राह्मण का आंग्ल भाषा में अनुवाद श्री ए० बी० कीथ; हारवर्ड ओरियण्टल सीरिज, वाल्यूम २५,१९२०।

(घ) ऐतरेय ब्राह्मण श्री मार्टिन हॉग द्वारा सम्पादित। बम्बई सरकार द्वारा दो जिलों में सन् १८६२ ई० में प्रकाशित।

(ङ) कौषीतकि ब्राह्मण-श्री बी० लिण्डनर द्वारा सम्पादित किया जो सन् १८८७ ई० में जेना नगर में —मुद्रित हुआ।

(च) शाङ्खायन ब्राह्मण अंग्रेजी भाषा में अनुवाद-अनुवादक श्री ए० बी० कीथ, हॉवर्ड ओरिण्यटल सीरिज़ वाल्यूम २५, सन् १९२० ई०

(छ) शाङ्खायण ब्राह्मण-सम्पादक-श्री गुलाबशंकर जयशंकर, आनन्द आश्रम, संस्कृत ग्रन्थालय पूना १९११ ई०।

(ज) ऐतरेय ब्राह्मण का अच्छा संस्करण श्री-आउफ्रेक्ट महोदय का माना जाता है। इसमें सायणभाष्य के उपयोगी अंश और अनेक सूचियाँ भी दी गई हैं। बाननगर से १८७९ ई० में रोमन अक्षरों में प्रकाशित हुआ था।

शतपथ ब्राह्मण—में कुल चौदह काण्ड है। अध्यायों की संख्या १०० है। बेबर के मतानुसार इस शतपथ ब्राह्मण में १०० अध्याय (अथवा ६८ प्रपाठक), ४३८ ब्राह्मण, और ७६२४ कण्डिकायें हैं।

(क) शतपथ ब्राह्मण —(माध्यन्दिनीयम्) सायण, हरि स्वामी कृत भाष्य—सम्पादक श्री-ऐ० बेबर, पुनरावृत्ति लाइपज़िग १९२४ ई० पहला संस्करण १८५५ ई० में बर्लिन से निकला था।

(ख) शतपथ ब्राह्मण—माध्यन्दिनीयम्। अजमेर, वैदिक यन्त्रालय, संवत् १९५९ वि०।

(ग) शतपथ ब्राह्मण। काण्वशाखा। डब्ल्यू० कॅलेंड। अंग्रेजी प्रस्तावना। १९२६ ई०।

(घ) शतपथ ब्राह्मणम्—सायणभाष्य सहितम्। काण्ड १-३, ५-७-९, सम्पादक पं० सत्यव्रत

जी सामश्रमी सन् १९०३-१९११ ई०, एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बङ्गाल, कलकत्ता, भाग १-७।

(ङ) शतपथ ब्राह्मण का आंग्ल भाषा में श्रीजुलियस एगलिंग (Shri Julius Eggeling) द्वारा अनुवादित (Secred Books of the East, VoL. 12, 26, 41, 43 & 44)

(च) पं० बुद्धदेव विद्यालङ्कार तथा पं० मोतीलाल शास्त्री कृत कुछ हिन्दी भाष्य प्रकाशित

कृष्ण यजुर्वेदीय ब्राह्मण:

(क) तैत्तिरीय ब्राह्मण—सायण भाष्य सहितम्। श्री राजेन्द्र लालमित्र द्वारा सम्पादित व एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बङ्गाल, कलकत्ता द्वारा सन् १८५९-१८९० में भाग १-३ प्रकाशित।

(ख) तैत्तिरीय ब्राह्मणम्—सायण भाष्य सहितम्। पं० नारायण शास्त्री द्वारा सम्पादित। भाग १-३। आनन्दाश्रम, पूना द्वारा सन् १८९९ ई० में प्रकाशित।

(ग) तैत्तिरीय ब्राह्मणम्—भट्टभास्कर भाष्ययुतम्। सम्पादक—पं० महादेव शास्त्री तथा श्री निवासाचार्य। भाग १-४। सन् १९०८-१९२१ ई०। मैसूर।

सामवेदीय ब्राह्मण:—

ताण्ड्य ब्राह्मण—में २५ प्रपाठक और ३४७ खण्ड हैं। इसे पञ्चविंश, प्रौढ़ तथा महाब्राह्मण भी कहते हैं।

(क) ताण्ड्य महाब्राह्मणम्—सायण भाष्य सहितम्। सम्पादक–श्री आनन्दचन्द्र वेदान्तवागीश। एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बङ्गाल, कलकत्ता। सन् १८७० ई०।

(ख) षड्विंश ब्राह्मणम्—विज्ञापन भाष्य सहितम्। सम्पादक—एच० एफ० ईलसिंह लाईडन। सन् १९०८ ई०।

(ग) षड्विंश ब्राह्मणम्—सायण भाष्य सहितम्। प्रथम प्रपाठक। सम्पादक—श्रीकुर्टक्लेम्न गुटेशलाह (Kurt Klemn, Guteslah)। सन् १८९४ ई०।

(घ) मन्त्र ब्राह्मणम्—सम्पादक पं० सत्यव्रत जी सामश्रमी। संवत् १९४७ वि०। कलकत्ता।

(ङ) मन्त्र ब्राह्मणम्—प्रथम: प्रपाठक:। सम्पादक—श्री हाईरीक स्टोन्नर (Heiurich Stonner) सन् १९०१ ई०।

(च) दैवत ब्राह्मणम्—सम्पादक—पं० जीवानन्द विद्यासागर, कलकत्ता सन् १८८१ ई०।

(छ) अद्भुत ब्राह्मण का सम्पादन प्रो० बेबर ने किया और यह संस्करण जर्मन अनुवाद के साथ, सन् १८५८ ई० में बर्लिन से प्रकाशित हुआ।

(ज) आर्षेय ब्राह्मणम्—डब्ल्यू० कैलेड।

(झ) जैमिनीय आर्षेय ब्राह्मणम्—सम्पादक—श्री ए० सी० बर्नेल। मंगलौर १८७६ ई०।

(ञ) साम विधान ब्राह्मणम्—सायण भाष्य सहितम्। पं० सत्यव्रत जी सामश्रमी द्वारा सम्पादित। कलकत्ता। सन् १८७६ ई०।

(ट) साम विधान ब्राह्मणम्—सायण भाष्य सहितम्। सम्पादक—श्री एस० सी० बर्नेल। लन्दन १८७३ ई०।

(ठ) संहितोपनिषद् ब्राह्मणम्—भाष्य सहितम्। सम्पादक—श्री ए० सी० बनल। मंगलौर। सन् १८७७ ई०।

(ड) वंश ब्राह्मणम्—सायण भाष्य सहितम्। सम्पादक—पं० सत्यव्रत सामश्रमी कलकत्ता। संवत् १९५१ वि०।

[सामश्रमी जी ने वंग भाषा में भी अनुवाद किया था।]

(ढ) वंश-ब्राह्मणम्। सम्पादक—श्री ए० सी० बर्नेल। सन् १८७३ ई० मंगलौर।

(ण) वंश-ब्राह्मणम् । बेबर द्वारा सम्पादित बर्लिन ।

(त) देवताध्याय ब्राह्मणम्। सम्पादक श्री ए० सी० बर्नेल । १८७३ ई० मंगलौर ।

(थ) देवताध्याय ब्राह्मणम् । पं० सत्यव्रत सामश्रमी । वंगभाषानुवाद ।

(द) जैमिनीय ब्राह्मणम्। सम्पादक पं० वेदव्यास (अथवा तलवकार ब्राह्मणम्) जी एम० ए० । लाहौर ।

(ध) उस जैमिनीय ब्राह्मण इन आऊसवाहल, अमस्टर्डम, सन् १९१९ ई० ।

(न) जैमिनीय आर्षेय ब्राह्मण । सम्पादक—श्री- ए० सी० बर्नेल । सन् १८७६ ई० मंगलौर ।

(प) जैमिनीय उपनिषद् ब्राह्मणम् । इसका सम्पादन श्री एच० एर्टल ने किया और उसे "अमेरिकन ओरिएण्टल जर्नल" की सोलहवीं जिल्द में, अंग्रेजी अनुवाद और टिप्पणियों सहित प्रकाशित किया ।

इसका देवनागरी संस्करण, लाहौर १९२१ ई० ।

अथर्ववेदीय ब्राह्मणः—

इसका मुख्य "गोपथ ब्राह्मण" है । इसके पूर्व उत्तर दो भाग हैं । पूर्व भाग में ५ प्रपाठक और उत्तर भाग में ६ प्रपाठक हैं । कुल मिलाकर इस ब्राह्मण में ११ प्रपाठक हैं ।

(क) गोपथ ब्राह्मणम् को बड़ी योग्यता के साथ श्री डी० गास्ट्रा (D. Gadstra) ने सम्पादित किया है। यह लेडन (Lydan) नगर से सन् १९१९ ई० प्रकाशित हुआ है।

(ख) गोपथ ब्राह्मणम् । श्री राजेन्द्र लाल मित्र व श्री हरचन्द विद्याभूषण । कलकत्ता । १८७०-१८७२ ई० ।

(ग) गोपथ ब्राह्मणम्। पं० क्षेमकरणदास त्रिवेदी। हिन्दी अनुवाद, प्रयाग ।

कतिपय अनुपलब्ध ब्राह्मणः—

यजुर्वेदीय ब्राह्मणः—चरक ब्राह्मण, श्वेताश्वतर ब्राह्मण, काठक ब्राह्मण, मैत्रायणी ब्राह्मण, जावाल ब्राह्मण, खाण्डिकेय ब्राह्मण, औखेय ब्राह्मण, हारिद्रविक ब्राह्मण, आह्वरक ब्राह्मण, कंकति ब्राह्मण ।

सामवेदीय ब्राह्मणः— शाट्यायन ब्राह्मण, भाल्लवि ब्राह्मण, रौकको ब्राह्मण, कालबवि ब्राह्मण ।

अनिश्चितशाखा के ब्राह्मणः— आरुणेय ब्राह्मण, तुम्बरु ब्राह्मण, सौलभ ब्राह्मण, माषशरावि ब्राह्मण, पैङ्गि ब्राह्मण, पराशर ब्राह्मण, शैलाली ब्राह्मण, अन्वाख्यान ब्राह्मण, बाष्कल ब्राह्मण, माडूकेय ब्राह्मण ।

उपर्युक्त ब्राह्मण ग्रन्थ आजकल प्रायः लुप्त हैं। सम्भवतः हस्त लिखित रूप में किसी पुस्तकालय में हों । वैदिक गवेषकों को गवेषणा करनी चाहिए ।

ब्राह्मणों का संकलन समय—

पिछले प्रमाणों से यह स्पष्ट प्रमाणित हो गया कि ब्राह्मण ग्रन्थ ऋषियों की कृतियाँ हैं ।

विद्वानों का विचार है कि इन ब्राह्मण ग्रन्थों का संकलन महाभारत कालीन है ।

बृहदारण्यकोपनिषद् ४ । ६ । ३ तथा ६ । ५ ४ के वंश ब्राह्मणों के अनुसार ब्राह्मण वाक्यों का आदि प्रवचन कर्त्ता ब्रह्मा माना गया है । प्रजापति, मन्वादि महर्षियों का नाम भी ब्राह्मण वाक्यों के प्रवचन कर्त्ताओं में लिया जाता है। कई एक ब्राह्मण अंशों के प्राचीन होने पर भी यह निश्चय करना कठिन है कि उनका वास्तविक काल क्या था । हाँ, यह कहा जा सकता है कि इनका संकलन महाभारत काल में कृष्णद्वैपायन, याज्ञवल्क्य प्रभृति ने किया था । शतपथ आदि ब्राह्मणों में अनेक स्थलों पर उन ऐति-

हासिक व्यक्तियों के नाम पाए जाते हैं जो महाभारत काल के कुछ ही पूर्वके थे। यथा—

(१) तेनहैतेन भरतो दौःष्यन्तिरीजे···
तदेतद् गाथवाभिगीतम्
अष्टासप्तर्ति भरतो दौःष्यन्तिर्यमुनामनु,
गङ्गायां वृत्रघ्नेऽबध्नात् पञ्च पञ्चाशत ঙ্হयान् ॥ इति ॥ ११ ॥
शकुन्तला नाडपियप्सरा भरतं दधे ॥१३॥
महदद्य भरतस्य नपूर्वे नापरे जनाः।
दिवंमर्त्य इव बाहुभ्यां नोदापुः पञ्चमानवाः ॥ इति ॥ १४ ॥
[शतपथ ब्रा० १३ । ५ । ४]

(२) "ऐतेनह वा ऐन्द्रेण महाभिषेकेण
दीर्घतमा मामतेयो भरतं दौष्यन्तिमभिषिषेच।
···तदप्येते श्लोका अभिगीताः।
[ऐतरेय ब्रा० ८ । २३]

इन गाथाओं-यज्ञ गाथाओं श्लोकों में वर्तमान दौष्यन्ति भरत और शकुन्तला नाम स्पष्ट महाभारत काल से कुछ पूर्व होने वाले व्यक्तियों के हैं, अतएव इन सब ब्राह्मणों को महाभारत काल का मानना ही युक्ति संगत है।

(३) ब्राह्मण ग्रन्थों के महाभारत कालीन होने में स्वयं महाभारत की साक्षी है—
"ब्रह्मणा ब्राह्मणानां च तथानुग्रहकाङ्क्षया।
विव्यास वेदान् यस्मात् स तस्माद्व्यास इति स्मृतिः ॥ १३० ॥
वेदाध्यापयामास महाभारतपञ्चमान्।
सुमन्तुं जैमिनिं पैलं शुकं चैव स्वमात्मजम् ॥ १३१ ॥
प्रभुर्वरिष्ठो ररदो वैशम्पायनमेवच।
संहितास्तै पृथक्त्वेन भारतस्य प्रकाशिताः ॥ ॥ १३२ ॥"
[महाभारत आदि पर्व अध्याय ६४]

अर्थात्—"वेदव्यास के सुमन्तु, जैमिनि, वैशम्पायन, पैल चार शिष्य थे। इन्हीं चारों को उन्होंने वेदादि ग्रन्थ पढ़ाये।"

यह व्यास भी पराशर्य व्यास थे। इसका प्रमाण यह है—

"विविक्ते पर्वततटे पाराशर्यो महातपाः।
वेदानध्यापयामास व्यासः शिष्यान् महातपाः।२६।
सुमन्तुं च महाभागं वैशंपायनमेवच।
जैमिनिं च महाप्राज्ञं पैलं चापि तपस्विनम्।२७।"
[महाभारतः शान्तिपर्व अध्याय ३३५]

यहाँ स्पष्ट ही कहा है कि सुमन्त्वादि पाराशर्य व्यास के शिष्य थे। और क्योंकि ये ब्राह्मण ग्रन्थों के प्रवचनकर्त्ता थे। अतः ब्राह्मण ग्रन्थ द्वापर के अन्त में ही एकत्र किए गए थे।

(४) याज्ञवल्क्य भी महाभारत कालीन ही हैं। महाभारत में ही लिखा है—

"वको दालभ्यः स्थूलशिराः कृष्णद्वैपायनः शुकः।
सुमन्तु जैमिनिः पैलो व्यास शिष्यास्तथा वयम् ॥ २७ ॥
तित्तिरर्याज्ञवल्क्यश्च ससुतो रोमहर्षणः॥"
[महाभारत सभापर्व, अध्याय ४]

अर्थात्—वकदालभ्य, स्थूलशिर, कृष्ण द्वैपायन, शुक, सुमन्तु, जैमिनि, पैल, तित्तिर, याज्ञवल्क्य थे। सब ऋषि महाराज युधिष्ठिर की सभा को सुशोभित कर रहे थे।

(५) भीष्म उवाच—

एतन्मयाऽऽप्तं जनकात् पुरस्तात्
तेनापि चाप्तं नृप याज्ञवल्क्यात्।
ज्ञातं विशिष्टं न तथा हि यज्ञा
ज्ञानेन दुर्गं तरते न यज्ञैः ॥ १०६ ॥
[महाभारत, शान्तिपर्व, अ० ३२३]

अर्थात्—"भीष्म जी कहते हैं, यह ज्ञान मैंने पहले जनक से प्राप्त किया था। और हे राजन्! जनक जी ने याज्ञवल्क्य से पाया था। ज्ञान यज्ञों से बढ़कर है। ज्ञान से कठिन मार्ग तय कर लेता है यज्ञों से नहीं।"

शान्तिपर्व के उपदेश के समय भीष्म जी की आयु २०० वर्ष से कुछ कम ही थी। इस गणनानुसार देवराति जनक महाभारत युद्ध से १५० वर्ष के अन्दर २ हो सकता है। अतएव शतपथ ब्राह्मण भी महाभारत काल में ही 'प्रोक्त' हुआ इसमें लेशमात्र भी सन्देह नहीं।

(६) शतपथ ब्राह्मण और उसके प्रवचनकर्त्ता ऋषि याज्ञवल्क्य जी महाभारत कालीन ही है इसकी साक्षी शतपथ ब्राह्मण में ही है—

"अथ पृषदाज्यं तदुह चरकाध्वर्यवः पृषदाज्यमेवाग्रेऽभिधारयन्ति प्राणः पृषदाज्यमिति वदन्तस्तदुह याज्ञवल्क्यं चरकाध्वर्यु रनुव्याजहार।

[शतपथ ब्रा० ३।८।२।२४]

"यदि तं चरकेभ्यो वा यतोवानुब्रुवीत।"

[शतपथ ब्रा० ४।२।४।१]

"तदुह चरकध्वर्यवो विगृह्णन्ति।"

[शतपथ ब्रा० ४।२।३।१५]

"ताऽउह चरकाः। नानैव मन्त्राभ्यां जुह्वति प्राणोदानौ वा···

[शतपथ ब्रा० ४।१।२।१९]

"त दुह चरकाध्वर्यवः।"

[शतपथ ब्रा० ६।२।२।४ [

"प्राजापत्यं चरका आलभन्ते।"

[शतपथ ब्रा० ६।२।२।४]

"इतिह स्माह माहित्थिर्यं चरकाः प्राजापत्ये पशावाहुरिति।"

[शतपथ ब्रा० ६।२।१।१०]

इत्यादि स्थलों में जो "चरक" अथवा "चरकाध्वर्यु" कहे गए हैं, वे सब वैशम्पायन शिष्य हैं। वैशम्पायन महाभारतकालीन थे।

(७) ऋषि याज्ञवल्क्य और शतपथ ब्राह्मण के महाभारतकालीन होने में एक और भी प्रमाण है:—

महाराज जनक की सभा में याज्ञवल्क्य का ऋषियों के साथ जो महान् संवाद हुआ था, उसका वर्णन शतपथ ब्रा०, काण्ड ११-१४ में है। ऋषियों में एक विदग्ध शाकल्य ११।४।६।३ था याज्ञवल्क्य के एक प्रश्न का उत्तर न देने से उसकी मूर्धा गिर गई १४।५।७।२८॥

(८) काठक संहिसा ७।८ में लिखा है कि—

"दिवोदासो भैमसेनिरारूणिमुवाच।"

अर्थात्—"भीमसेन का पुत्र दिवोदास आरुणि को बोला।"

दिवोदास, याज्ञवल्क्य का सहवर्ती है। यह दिवोदास उसी भीमसेन का पुत्र है, जो परीक्षित था।

शतपथ ब्राह्मण १३।५।४३ में लिखा है—

"एतेऽएव पूर्वेऽअहनी। तेन भीमसेनं तेनोग्रसेनं तेन श्रुतसेनमित्येते पारिक्षितीयाः।

अर्थात्—भीमसेन, उग्रसेन और श्रुतसेन, ये पारिक्षितीय थे। ये महानुभव महाभारत काल से एक पीढ़ी पहले के थे।

(९) कृष्णद्वैपायन (वेदव्यास) और वादरायण एक ही व्यक्ति थे। 'वेदान्त सूत्र' वेदव्यास का अन्तिम ग्रन्थ कहा जाता है। वेदान्तसूत्रों में उपनिषदों, आरण्यकों, ब्राह्मणों और मन्त्र संहिताओं का स्पष्ट कथन किया गया है। यथा—

"ईक्षतेर्नाशब्दम्।"

[१।१।५]

"श्रुतत्वाच्च।" १।१।११॥

"मन्त्रवर्णिकमेव च गीयते।" १।१।१५॥

"अन्तर्याम्यधिदैवादिषु तद्धर्मव्यपदेशात्।"

॥१।२।१८॥

"शारीरश्चोभयोऽपि हि भेदेनैनमधीयते।"

॥१।२।२०॥

"आमनन्ति चैनमस्मिन्।" १।२।३२॥

"परात्तु तच्छ्रुतेः।" २।३।४१॥

"अग्न्यादिगति श्रुतेरिति चेन्न भाक्तत्वात्।"

॥३।१।४॥"

"पुरुषविद्यायामिव चेतरेषामनाम्नात् ।।"
।। ३ । ३ । २४ ।।

"शब्दश्चातोऽकामकारे ।। ३ । ४ । ३१ ।।"

इन सूत्रों में छान्दोग्योपनिषद्, श्वेताश्वतरोपनिषद्, तैत्तिरीयोपनिषद्, वृहदारण्यकोपनिषद्, काण्व और माध्यन्दिन शतपथ ब्राह्मण, जाबालोपनिषद्, कौषीतकि उपनिषद्, ताण्डी और पेङ्गि लोगों के ब्राह्मण, तथा काठक संहिता की श्रुतियों का क्रमशः वर्णन है ।

वेद व्यास और उनके शिष्य-प्रशिष्यों ने ही ब्राह्मणों का सङ्कलन प्रारम्भ किया था । वेदान्त सूत्रों में इन सब के प्रमाण आ जाने से यह निश्चय होता है कि वेदव्यास जी के जीवन काल में ही सङ्कलन समाप्त हो चुका था । इस प्रकार यह निश्चय होता है कि ब्राह्मण ग्रन्थ महाभारत काल में ही सङ्कलित हुए ।

(१०) महाभारत आदि पर्व; अध्याय ६३ में कहा है—

"प्रतीपस्तु खलु शैब्यामुपयेमे सुनन्दीं नाम । तस्यांत्रीन् पुत्रानुत्पादयामास । देवापिं शन्तनुं बाह्लीकं चेति ।।४७।।

अर्थात्—"प्रतीप ने सुनन्दी से विवाह किया । उसमें उसने तीन पुत्र देवापि, शन्तनु और बाह्लीक उत्पन्न किये ।"

प्रतीप के इस तीसरे पुत्र बाह्लीकका वर्णन 'शतपथ ब्राह्मण' में मिलता है—

"तदु ह बल्हिकः प्रातिपीयः शुश्राव कौरव्यो राजा ।" [शतपथ ब्रा० १२ । ९ । ३ । ३]

यह व्यक्ति महाभारत कालीन ही है और इसका उल्लेख करने से शतपथ भी लगभग उसी काल का ठहरता है ।

ब्राह्मण ग्रन्थ ब्रह्मा के काल से बनने प्रारम्भ हुए और उनका अन्तिम संग्रह महाभारत काल में हुआ । इस सम्बन्ध में महर्षि दयानन्द जी सरस्वती महाराज की भी यही सम्मति है । वे "ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका" के "भाष्यकरण शङ्का समाधानादि विषय" के आरम्भ में लिखते हैं ।—

"यानि पूर्वैर्देवैर्विद्वद्भिर्ब्रह्माणमारभ्य याज्ञवल्क्यवात्स्यायन जैमिन्यन्तैर्ऋषिभिश्चैतरेय शतपथादीनि भाष्याणि रचितान्यासन् ।"

अर्थात्—"ब्राह्मण ग्रन्थों का प्रवचन ब्रह्मा से लेकर याज्ञवल्क्य, वात्स्यायन और जैमिनि ऋषि तक होता रहा है ।"

जैमिनि, वेद व्यास का शिष्य था और पूर्वोक्त वाक्य में याज्ञवल्क्य और वात्स्यायन, जैमिनि के साथ ही समझे गये हैं । अतएव महर्षि दयानन्द जी के अनुसार भी ब्राह्मणों के अन्तिम प्रवक्ता महाभारत काल में विद्यमान थे ।

[शेष पृष्ठ २४ का]

को छोड़ देता है । अजा का अर्थ है, अ+जा, अर्थात् पैदा कभी न होने वाली । अज का अर्थ है, अ+ज, अर्थात् पैदा कभी न होने वाला जो कभी पैदा नहीं होता वह कभी नष्ट भी नहीं होता, उसे अनादि अनन्त कहते हैं । इस प्रकार इस वाक्य में ऋषि लोगों ने तीन वस्तुओं को अनादि और अनन्त बतलाया है । एक अजा अर्थात् प्रकृति । दूसरी वस्तु वह अज है जो अजा अर्थात् प्रकृति से प्रीति करता है, उस अज का नाम जीव है, उसे जीवात्मा भी कहते हैं । तीसरा वस्तु वह अज है जो अजा से प्रीति में नहीं फंसता अर्थात् जो अजा को छोड़ देता है, जिसे ईश्वर या परमात्मा कहते हैं ।" १ ।।

"सुन्दर पंखों वाले, सदा साथ रहने वाले, एक दूसरे के मित्र, दो पक्षी हैं । दोनों एक ही वृक्ष पर निबास करते हैं । दोनों में से एक पक्षी तो उस वृक्ष के सुस्वादु फलों को खूब आनन्द से खाता है किंतु दूसरा पक्षी नहीं खाता, वह केवल मात्र देखता ही रहता है । ये दो पक्षी हैं जीवात्मा और परमात्मा वृक्ष है प्रकृति । जीवात्मा कर्मफलों का उपभोग करता है । परमात्मा केवल साक्षी मात्र ही रहता है ।" २ ।।

इस प्रकार उन श्वेताश्वतर आदि महर्षियों ने दूसरी निश्चित बात यह बताई कि प्रकृति से ही सब विश्व बना हुआ है ।

ब्राह्मण संज्ञा विवेचन

★ श्री आचार्य शिवपूजन सिंह जी कुशवाहा एम० ए०

क्या वेदों की शाखाएँ अनादि हैं ?

पौराणिक वर्ग शाखाओं को अनादि मानता है।[1] पर आर्य समाज उसको वेदों के *व्याख्यान* मात्र ही मानता है।

पुराणों ने जिस प्रकार शाखा भेद बताया है वह ऊटपटांग हैं।

आचार्य पं० सत्यव्रत जी सामश्रमी भी यही कहते हैं कि:—

"...पौराणिकः शाखा भेदो मन्वादिमतविरुद्ध इत्यनुमानञ्चनासङ्गतम्।[2]"

अर्थात्—"पौराणिक शाखा भेद मनु आदि के मत के विरुद्ध ऐसा हमारा अनुमान असङ्गत नहीं है।

महर्षि दयानन्द जी सरस्वती लिखते हैं—

प्रश्न—वेदों की कितनी शाखा हैं ?

उत्तर—ग्यारह सौ सत्ताईस।

प्रश्न—शाखा क्या कहाती हैं ?

उत्तर—व्याख्यान को शाखा कहते हैं।

प्रश्न—संसार में विद्वान् वेद के अवयवभूत विभागों को शाखा मानते हैं।

उत्तर—तनिक सा विचार करो तो ठीक, क्योंकि जितनी शाखा हैं वे आश्वालायन आदि ऋषियों के नाम से प्रसिद्ध हैं और मंत्र संहिता परमेश्वर के नाम से प्रसिद्ध है। जैसे चारों वेदों को परमेश्वर कृत मानते हैं वैसे आश्वालायनी आदि शाखाओं को उस २ ऋषि कृत मानते हैं और सब शाखाओं में मन्त्रों की प्रतीकें धर के व्याख्या करते हैं, जैसे तैत्तिरीय शाखा में "इषे त्वोर्जेत्वेति" इत्यादि प्रतीकें धर के व्याख्यान किया है। और वेद संहिताओं में किसी की प्रतीक नहीं धरी। इसलिए परमेश्वर कृत चारों वेद मूल वृक्ष और आश्वालायनादि सब शाखा ऋषि मुनि कृत हैं, परमेश्वर कृत नहीं।

जो इस विषय की विशेष व्याख्या देखना चाहें वे "ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका" में देख लेवें। जैसे माता-पिता अपनी सन्तानों पर कृपा दृष्टि कर उन्नति चाहते हैं वैसे ही परमात्मा ने सब मनुष्यों पर कृपा करके वेदों को प्रकाशित किया है, जिससे मनुष्य अविद्यान्धकार भ्रमजाल से छूठकर विद्या विज्ञान रूप सूर्य को प्राप्त हो अत्यानन्द में रहें और विद्या तथा सुखों की वृद्धि करते जायें।[3]

पुनः—"और ११२७ (ग्यारह सौ सत्ताईस) वेदों की शाखा जो कि वेदों के व्याख्यान रूप ब्रह्मादि महर्षियों के बनाए ग्रन्थ हैं, उनको परतः प्रमाण अर्थात् वेदों के अनुकूल होने से प्रमाण और जो इनमें वेद विरुद्ध वचन हैं उनका अप्रमाण करता हूँ।"[4]

एवं—"वैसे ही ग्यारह सौ सत्ताईस (११२७)

---

१. श्री करपात्री जी महाराज कृत "वेद का स्वरूप और प्रामाण्य" प्रथम संस्करण पृष्ठ ३७६।

२. "ऐतरेयालोचनम्" द्वितीय संस्करण १२४।

३. "सत्यार्थ प्रकाश" सप्तम समुल्लास।

४. "स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश २"

वेदों की शाखाएँ भी उनके व्याख्यान हैं।"[५]

महर्षि दयानन्द जी महाराज ने शाखाओं के सम्बन्ध में जो कुछ लिखा है वह अक्षरशः सही है, पर पौराणिक लोग अपने पक्ष की पुष्टि में यह एक प्रबल प्रमाण प्रस्तुत करते हैं कि—

"महाभाष्कार ऋषि पतञ्जलि ने चारों वेदों की ११३१ शाखाएँ लिखी हैं—"एकविंशतिधा वाह्वृच्यम् । एकशतमध्वर्युः शाखाः सहस्रवर्मा सामवेद । नवधाथर्वणो वेदः"—[पस्पसाह्निक] २१ प्रकार का ऋग्वेद है। १०१ यजुर्वेद की शाखा है। १००० शाखाओं वाला सामवेद है। ९ प्रकार का अथर्ववेद है। (२१+१०१+१०००+९= ११३१)।

महाभाष्य में जो शाखाओं की संख्या दी है, वह मूल वेदों को सम्मिलित करके दी है इसीलिए उनकी वर्णित शाखा संज्ञा का योग ११३१ है। इन में से ४ मूल वेदों को निकाल देने से वही ११२७ शाखाओं की वास्तविक संख्या रह जाती है।

पौराणिकों के मान्य ग्रन्थों में वेदों की शाखाओं के विषय में अनेक विभिन्न संख्याएँ दी हैं। यथा—

वेद व्यास जी २२१०९ वेदों की शाखायें मानते हैं:—

"एक विंशति साहस्रं ऋग्वेदं मां प्रचक्षते ।
सहस्र शाखंयत् सामय ये वै वेद विदोजनाः ॥
गायन्त्यारण्यके विप्रो मद्भक्तास्तेहि दुर्ल्लभाः ॥९४॥
षट्पंचाशतमष्टौ च सप्तंति शतमित्युत ।
यस्मिञ्छाखा यजुर्वेदे सोऽह माध्वर्य्यवे स्मृतः ॥९५॥
पंचकल्पमथर्वाणां कृत्याभिः परिवृंहितम् !
कल्पयन्ति हि मां विप्रा अथर्वाणविदस्तथा ॥९६॥
शाखा भेदश्च ये के चिद्याश्च शाखा सुगीतयः ।
स्वरवर्ण समुच्चाराः सर्वास्तान् विद्धिमत् कृतान् ॥
॥९७॥"

[महाभारत शान्ति० अ० ३४२]

अर्थात्—"इक्कीस सहस्र ऋग्वेद मुझको ही वर्णन करता है और एक सहस्र शाखा वाले सामवेद को जो निश्चय से वेद के जानने वाले मेरे विप्र जंगल में गाते हैं वे भी दुर्लभ हैं॥ ९४॥ छप्पन और आठ तथा सैंतीस भी यजुर्वेद में शाखा हैं वह मैंने अध्वर्यु के लिए नियत की है ॥ ९५॥ पांच कल्प अथर्ववेद जो क्रियाओं से परिपूर्ण हैं अथर्ववेद के जानने वाले ब्राह्मण मुझको ही कल्पना करते हैं॥ ९६॥ जो कोई भी शाखाओं के भेद हैं और जो शाखाओं में गायण हैं और जो उनमें स्वर तथा वर्ण का उच्चारण है उन सब मेरे ही बनाए हुए समझना चाहिए।

उपनिषद्कार कहते हैं—

"ऋग्वेदादि विभागेन वेदाश्चत्वार ईरिताः ।
तेषां शाखाह्यनेकाःस्युस्तासूपनिषदस्तथा ॥
ऋग्वेदस्य तु शाखारेस्स्युःकविशंतिसंख्यकाः ।
नवाधिकशतं शाखा यजुषो मारुतात्मजः ॥
सहस्रसंख्यया जाताः शाखाः साम्नः परन्तप ।
अथर्वणस्य शाखाःस्युः पंचाशद्भेदतो हरे ॥

[शुक्ल यजुर्वेदीय मुक्तिकोपनिषद् प्रथम अध्याय ११-१३]

अर्थात्—"(श्रीराम जी ने कहा) वेद चार कहे गए हैं—ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद। उन चारों की अनेक शाखाएँ हैं, और उन शाखाओं के उपनिषद् भी अनेकों हैं। ऋग्वेद की २१ शाखाएं हैं। पवनतनय ? यजुर्वेद की १०९ शाखाएं। और शत्रुतापन ! सामवेद से सहस्र शाखाएं निकली हैं। कपीश्वर ! अथर्ववेद की शाखाओं के पचास भेद हैं।"[६]

यहां पर ११८० वेदों की शाखाओं का वर्णन स्वयं श्री रामचन्द्र जी ने अपने मुखारविन्द से किया है।

५. ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका" "भाष्यकरण शंकासमाधानादि विषयः।"

६. मासिक पत्र "कल्याण" गोरखपुर का "उपनिषद्-अङ्क" वर्ष २३, जनवरी १९४९ ई०, संख्या १, पृष्ठ ६२३,

उन्होंने वेद तो चार ही गिनाए हैं जैसा महर्षि दयानन्द जी कहते हैं।

"शौनकोक्त चरणव्यूह परिशिष्ट" में ऋग्वेद की ५, यजुर्वेद की ८६, सामवेद की १०००, अथर्ववेद की ९ शाखाओं का वर्णन है।"

शोनक के मतानुसार ११०० शाखाएँ हैं।

देवी पुराण अध्याय ७ में लिखा है—

प्रथम एक वेद था फिर उसके चार वेद ऋग् आदि किए गये—ऋग्वेद की १० शाखाएँ हैं। शिवाज्ञा से मैंने यजुर्वेद के ८६ भेद किए है। साम के १००० भेद हैं और अथर्ववेद के ९ भेद हैं।

इस प्रकार कुल ११०५ शाखायें हुईं।

"विष्णु पुराण" ३। ४ के अनुसार कुल संख्या १५+४२+१०००+९०=१०६६ हैं।

"मार्कण्डेय पुराण" अ० ४२, श्लो० २०-२२ में वेदों की शाखाएँ १००० लिखी है। [कात्यायन सर्वानुक्रमणिका की वृत्ति की भूमिका में श्री षड-गुरु शिष्य लिखते हैं कि कुछ ऋषियों के मत में सब वेदों की संख्या ११३१ है और दूसरों के मत में ११३७ भी :—है

"एकविंशत्यध्वयुक्तमृग्वेदमृषयो विदुः।
सहस्राध्वा सामवेदो यजुरेकशताध्वकम्॥
नवधाऽऽथर्वणोऽन्ये तु प्राहुः पञ्चदशाध्वकम्।"

कूर्म पुराण, अध्याय ४९ में लिखा है:—

एकविंशति भेदेन ऋग्वेदं कृतवान् पुरा।
शाखानां तु शतेनाथ यजुर्वेदमथाकरोत्॥ ५१॥
सामवेद सहस्रेण शाखानां च विभेदतः।
आथर्वणमथो वेदं विभेद नवकेन तु॥ ५२॥

कर्मपुराण के अनुसार वेदों का शाखा ११३० होती है।

पौराणिक पं० नकछेदजी अपनी पुस्तक सनातन धर्मोद्धार" में ऋग्वेद को २४, यजुर्वेद की ९८, सामवेद की १००० और अथर्ववेद की १२ कुल ११३४ वेदों की शाखायें मानते हैं।

इस प्रकार वेदों की २२१०६, ११८०, ११०० ११०५, १०६६, १०००, ११३७, ११३०, ११३१६, ११३१ शाखाओं का वर्णन मिलता है।

इन १० प्रकार की शाखाओं में कौन सा मान्य है इसे कोई पौराणिक विद्वान् बतला सकता है?

क्या कोई पौराणिक विद्वान् यह भी बतलाने का कष्ट कर सकता है कि श्री पतञ्जलि ऋषि ने जो ११३१ वेदों की शाखायें लिखी हैं तो वे किन वेदों की शाखायें हैं? उन वेदों का नाम क्या है?

[शेष पृष्ठ १७ का]

साधारणतया हमारे यहाँ कन्या का जन्म पिता के लिए बड़ा दुखद समझा जाता है क्योंकि वह पराया घर बसाती है। उसके लिए वर ढूंढने व विवाह करने में एवं उसे दहेज देने में बड़ा अर्थ व्यय करना पड़ता है। वास्तव में दहेज प्रथा समाज के लिए अभिशाप बन चुकी है।

बिना वर के पिता को राजी किये कन्या का विवाह करना कठिन हो गया है। अतः वर्तमान समाज व्यवस्था में सुधार करना परमावश्यक है। पराये घर बसाने की बात कह कर कन्या का अनादर करना सर्वथा अविचार पूर्ण है क्योंकि हमारे घर जो पुत्र-वधू आती है, वह पराये घर से आने पर भी हमारा घर बसाती है। वह तो बराबरी का सौदा है। विधवा बहिनों के प्रति तो हमें और भी अधिक सहानुभूति रखनी चाहिये एवं उन्हें समाज सेवा के योग्य बनाने का प्रयत्न करना चाहिये। वे चाहें तो समाज का कल्याण कर सकती हैं।

—××—